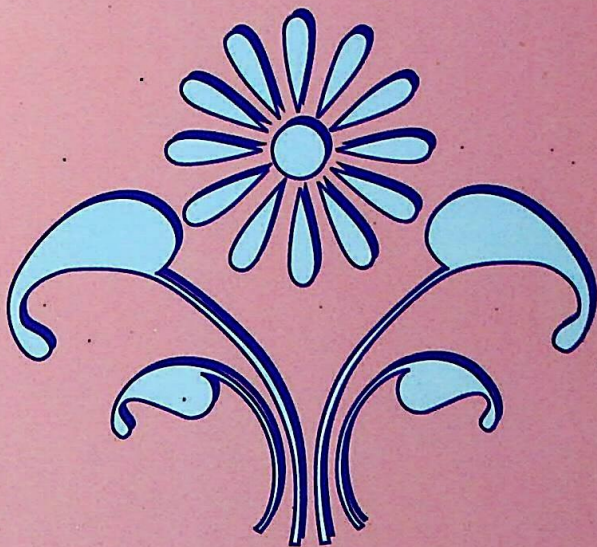


सज्जनाचरितम्

(स्वोपज्ञहिन्दी-अनुवादसहितं काव्यम्)



डॉ० हरिनारायणदीक्षितः

भीष्मचरितम्, भारतमाता ब्रूते, राधाचरितम् तथा श्रीग्वल्लदेवचरितम् नामवाले चार महाकाव्यों सहित अपनी अनेक कालजयी काव्यकृतियों की रचना द्वारा संस्कृत-भाषा-साहित्य को समृद्ध करने वाले, छात्रोपयोगी एवं समीक्षाशील ग्रन्थों की भी रचना द्वारा विद्यार्थियों एवं शोधार्थियों का पथप्रदर्शन करने वाले, अपनी प्रशंसनीय रचनाधर्मिता के फलस्वरूप अनेकवार पुरस्कृत एवं सम्मानित होने वाले, वीणापाणि माँ सरस्वती के निष्ठावान् उपासक, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल के प्राक्तन प्रोफेसर एवम् अध्यक्ष, संस्कृत-विभाग तथा प्राक्तन अधिष्ठाता, कला सङ्काय, डॉक्टर हरिनारायण दीक्षित द्वारा देववाणी संस्कृत में लिखा गया और उन्हीं के द्वारा राष्ट्रभाषा हिन्दी में अनूदित होने के कारण सर्वजनग्राह्य 'सज्जनाचरितम्' नामक काव्य संस्कृतसाहित्याकाश में अपनी गुणवत्ता की कान्ति से चमकने वाला अद्भुत नक्षत्र है। इसमें कवि ने सज्जनों के आचरित अर्थात् आचरण का वर्णन किया है। विषय के अनुरूप ही गीतिच्छन्द एवं अनुष्टुप् छन्द में निबद्ध, अर्थान्तरन्यास, दृष्ट्यन्त, अर्थापत्ति आदि अलङ्कारों से अलङ्कृत; सुभाषित- सम्पन्न, वैदर्भी शैली में प्रस्तुत इस काव्य की रचना द्वारा कवि ने सज्जनों के प्रशंसनीय आचरण का वर्णन करके समाज के अन्य लोगों को भी सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि महाकवि डॉ० दीक्षित की इस काव्यकृति का सहृदय विद्वज्जन स्वागत एवं अभिनन्दन करेंगे।

—डॉक्टर किरण टण्डन

प्रोफेसर एवम् अध्यक्ष, संस्कृत-विभाग,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल (उत्तराखण्ड)।

ISBN : 978-81-7854-217-1

₹ 550

सज्जनाचरितम्
(स्वोपज्ञहिन्दी-अनुवादसहितं काव्यम्)

संस्कृत-शब्द-कोश
(संस्कृत-शब्द-कोश-प्रस्तावना)

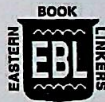


सज्जनाचरितम् (स्वोपज्ञहिन्दी-अनुवादसहितं काव्यम्)

रचयिता

डॉ० हरिनारायणदीक्षितः

एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्०,
व्याकरणाचार्यः, सांख्य-योगाचार्यः, साहित्याचार्यः, साहित्यरत्नम्,
प्राक्तन प्रोफेसर एवं संस्कृतविभागाध्यक्षः
तथा पूर्वकलासङ्कायाध्यक्षः,
कुमाऊँ विश्वविद्यालयः, नैनीतालः (उत्तराखण्डः)।



ईस्टर्न बुक लिंकर्स
दिल्ली :: (भारत)

प्रकाशकाः :

ईस्टर्न बुक लिंकर्स

५८२५, न्यू चन्द्रावल, जवाहरनगर,

दिल्ली-११०००७

फोन : २३८५०२८७, ९८११२३२९१३

ई-मेल : eblindology@gmail.com

वेब साईट : www.eblindology.com

प्रथमं संस्करणम् : ईशवीये २०१२ तमे वर्षे

© रचयितुः

मूल्यम् : ५५०.०० रूप्यकाणि

आइ.एस्.बी.एन्. : ९७८-८१-७८५४-२१७-१

सज्जनाचरितम् (काव्यम्)

मुद्रक

आर. के. प्रिंट सर्विस, दिल्ली

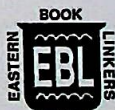
SAJJANĀCHARITAM

(A SANSKRIT KĀVYA WITH
SELF-MADE HINDI TRANSLATION)

By

Dr. Hari Narayan Dikshit

M.A., Ph. D., D. Litt., Vyakaranacharya,
Sankhya-Yogacharya, Sahityacharya, Sahityaratnam,
Formerly Professor & Head of the Department of Sanskrit,
Formerly Dean, Faculty of Arts,
Kumaun University, Nainital (Uttarakhand).



Eastern Book Linkers

DELHI

: :

(INDIA)

Published by :

EASTERN BOOK LINKERS

5825, New Chandrawal,

Jawahar Nagar,

Delhi-110007

Ph. : 23850287, 9811232913

E-mail : eblindology@gmail.com

Web Site : www.eblindology.com

First Edition : 2012

© The Author

Price : 550.00

ISBN : 978-81-7854-217-1

SAJJANĀCHARITAM (KĀVYAM)

Printed at :

R.K. Print Service, Delhi

समर्पणम्

सज्जनेभ्यो जगत्यस्मिन् निवसद्भ्यो यथा-तथा ।
सज्जनाचरितं नाम स्वं काव्यमिदमर्पये ॥

(इस संसार में जैसे-तैसे रह-रहे सज्जनों को मैं अपना यह सज्जनाचरितम् नामक काव्य समर्पित करता हूँ।)

—हरिनारायणदीक्षितः

गुरुवारो मकरसङ्क्रान्तिः,
माघकृष्णपक्षचतुर्दशी, वि०सं० २०६६,
दिनाङ्कः, १४ जनवरी, २०१० ईशवीयः।

सज्जनाः सन्त्यलङ्काराः

समाजस्य न संशयः ।

सरस्यो गिरयो नद्यो

भूमेर्वृक्षा लता यथा ॥

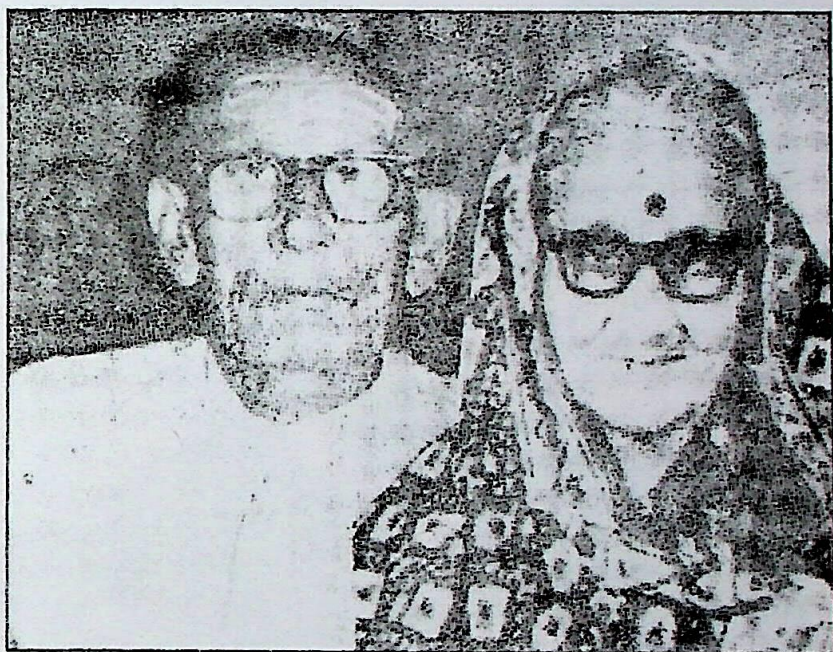
—इसी काव्य से, प० सं० २५०

जिस प्रकार पहाड़, झीलें, नदियाँ, वृक्ष और लताएँ पृथिवी के आभूषण हैं, उसी प्रकार सज्जन मानव-समाज के आभूषण हैं; इसमें कोई सन्देह नहीं है।



कवि के गुरुदेव
स्वामी श्री विद्यानन्द सरस्वती
शान्ति कुटीर पढ़कुला, पोष्ट सरावन,
जिला जालौन (उ० प्र०) ।





कवि के माता-पिता

श्रीमती सुदामा देवी दीक्षित एवं पण्डित रघुवीर सहाय दीक्षित



सज्जनाचरितम् के कवि
डॉक्टरहरिनारायणदीक्षित



कवि का संक्षिप्त परिचय

नाम—डॉ० हरि नारायण दीक्षित; माता-पिता—(स्वर्गीया) श्रीमती सुदामा देवी दीक्षित और (स्वर्गीय) पण्डित श्री रघुवीर सहाय दीक्षित; जन्मस्थान—ग्राम पड़कुला, पोष्ट सरावन, जिला जालौन (उत्तर प्रदेश); जन्मतिथि—१३ जनवरी, सन् १९३६ ईशवीय; शिक्षा—व्याकरणाचार्य, साङ्ख्य-योगाचार्य, साहित्याचार्य (सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से), साहित्यरत्न, हिन्दी और संस्कृत में (हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से), बी०ए०, एम्०ए०, पीएच०डी० (आगरा विश्वविद्यालय, आगरा से), डी०लिट० (कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल से); आजीविका—संस्कृताध्यापनकार्य; अध्यापन संस्थाएँ—(१) सीताराम जयराम संस्कृत महाविद्यालय, सुमेरपुर, जिला उन्नाव (उ०प्र०), (२) आदर्श संस्कृत महाविद्यालय, उरई, जिला जालौन (उ०प्र०), (३) बरेली कालेज, बरेली (उ०प्र०), (४) काशीनरेश राजकीय महाविद्यालय, ज्ञानपुर, जिला वाराणसी (उ०प्र०), (५) राजकीय महाविद्यालय, टिहरी-गढ़वाल, (६) डी०एस०बी० राजकीय महाविद्यालय, नैनीताल, (७) कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल; शोधनिर्देशन—पचपन (५५) शोध-छात्र-छात्राओं ने पीएच० डी० की उपाधि प्राप्त की; सेवानिवृत्तिकालीन पद एवं संस्था—प्रोफेसर एवं संस्कृत-विभागाध्यक्ष तथा अधिष्ठाता, कला सङ्काय, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल; रचनाएँ—१. संस्कृतानुवादकलिका, २. संस्कृतनिबन्धरश्मिः, ३. श्रीमदप्पयदीक्षितचरितम् (गद्यकाव्यम्), ४. तिलक-मञ्जरी: एक समीक्षात्मक अध्ययन, ५. राष्ट्रियसूक्तिसंग्रहः (स्वोपज्ञहिन्दी-अनुवादसहितः), ६. संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, ७. मेनकाविश्वामित्रम् (द्रुश्यकव्यम्), ८. संस्कृतनिबन्धावली, ९. शोधलेखावली, १०. श्रीहनुमद्दूतम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवादसहितं सन्देशकाव्यम्), ११. गोपालबन्धुः

(गद्यकाव्यम्), १२. गद्यकाव्यसमीक्षा, १३. भीष्मचरितम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवादसहितं महाकाव्यम्), १४. देशोऽयं कुरुते प्रोत्रतिम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अङ्ग्रेजी-अनुवादसहितं मुक्तककाव्यम्), १५. उपदेशशती (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवाद सहितं शतककाव्यम्), १६. भारतीयकाव्यशास्त्रमीमांसा (सहसम्पादित), १७. पण्डितराजजगन्नाथकाव्यग्रन्थावली (सम्पादित और हिन्दी में अनूदित), १८. गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालयीयम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवाद सहितं काव्यम्), १९. भारतमाता ब्रूते (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवाद सहितं महाकाव्यम्), २०. राधाचरितम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवादसहितं महाकाव्यम्), २१. बुन्देलखण्डी कवि पण्डित राजाराममिश्रकाव्यसंग्रह (सम्पादित), २२. श्रीगवल्लदेवचरितम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवाद सहितं महाकाव्यम्), २३. पशुपक्षिविचिन्तनम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवादसहितं खण्डकाव्यम्), २४. मनुजाश्शृणुत गिरं मे (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवाद सहितं मुक्तककाव्यम्), २५. अजमोहभङ्गम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवादसहितं खण्डकाव्यम्), २६. निर्वेदनिर्झरिणी (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवाद सहितं कथाकाव्यम्), २७. वाल्मीकिसम्भवम् (स्वोपज्ञहिन्दी-अनुवादसहितं रूपकम्), २८. दुर्जनाचरितम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवादसहितं काव्यम्), २९. सज्जनाचरितम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवादसहितं काव्यम्), ३०. श्रीगुरुमहाराजचरितम् (स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवादसहितम् अप्रकाशितं महाकाव्यम्); पुरस्कार—(१) श्रीहनुमद्दूतम् (सन्देशकाव्य) के लिए उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी, लखनऊ से सन् १९८७ ईशवीय में विशेष पुरस्कार, (२) गोपालबन्धुः (गद्यकाव्य) के लिए उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी, लखनऊ से सन् १९८८ ईशवीय में बाणभट्ट पुरस्कार, (३) भीष्मचरितम् (महाकाव्य) के लिए उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी, लखनऊ से सन् १९९१ ईशवीय में विशेष पुरस्कार, (४) तब तक की समग्र संस्कृत साहित्य-सर्जना के लिए भारतीय भाषा परिषद्, कलकत्ता, अर्थात् अद्यतन कोलकाता, से सन् १९९१ ईशवीय में संस्कृत साहित्य सम्मान पुरस्कार, (५) भीष्मचरितम् (महाकाव्य) के लिए साहित्य अकादमी, दिल्ली से सन् १९९२ ईशवीय में साहित्य अकादमी पुरस्कार, (६) संस्कृत साहित्य में विशिष्ट योगदान के लिए भारत सरकार से

सन् २००३ ईशवीय में राष्ट्रपति पुरस्कार, (७) साहित्य के क्षेत्र में विशिष्ट उल्लेखनीय योगदान के लिए लोक संस्कृति सेवा निधि, मण्डपम्, राठरोड, उरई, जिला जालौन (उत्तर प्रदेश) से सन् २००६ ईशवीय में पं० गौरी शंकर द्विवेदी 'शंकर' अलंकरण पुरस्कार, (८) अपनी समग्र-संस्कृत काव्य-रचना, विशेषरूपेण भीष्मचरितम् नामक महाकाव्य की रचना द्वारा संस्कृत साहित्य को समृद्ध करने के लिए रामकृष्ण जयदयाल डालमिया श्री वाणी न्यास, नई दिल्ली से ईशवीय सन् २००६ में रामकृष्ण जयदयाल डालमिया श्रीवाणी-अलङ्करण पुरस्कार, (९) संस्कृत साहित्य की संवृद्धि करने के लिए गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार से ईशवीय सन् २००७ में अन्ताराष्ट्रिय वेद-वेदाङ्ग-विद्वत्सम्मेलन में अन्ताराष्ट्रिय विद्यारत्नाकर सारस्वत सम्मान पुरस्कार, (१०) राधाचरितम् (महाकाव्य) के लिए के०के० बिरला फाउण्डेशन, नई दिल्ली से ईशवीय सन् २००८ में वाचस्पति पुरस्कार; आवासीय पता-१९६, बड़ा बाजार, मल्लीताल, नैनीताल (उत्तराखण्ड)-२६३००१; दूरभाष- ०५९४२-२३६९८१; इत्यलं विस्तरेण।

स्ववाक्

दुर्जनाचरितम् की स्वोपज्ञहिन्दी-अनुवादसहित रचना पूरी करने के बाद मेरे मन में यह विचार आया था कि मुझे अब सज्जनों के आचरितों को प्रतिपाद्य विषय बनाकर सज्जनाचरितम् के नाम से भी, दुर्जनाचरितम् के समानान्तर ही, एक 'और' काव्य की रचना करनी चाहिए। क्योंकि इस द्वन्द्वात्मक संसार में काँटे हैं, तो फूल भी हैं; दुःख हैं, तो सुख भी हैं; दुर्गुण हैं, तो सद्-गुण भी हैं; बुराईयाँ हैं, तो अच्छाईयाँ भी हैं; निन्दक हैं, तो प्रशंसक भी हैं; और दुर्जन हैं, तो सज्जन भी हैं। अतः मेरे विचार से लोगों की जानकारी भी यहाँ उभयात्मक होनी चाहिए। तभी उन्हें निवृत्ति के साथ ही साथ प्रवृत्ति की प्रेरणा भी मिलेगी। फलस्वरूप वे समाज में दुर्जनों से दूर और सज्जनों के समीप रहने का प्रयत्न करेंगे। यहाँ यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि समाज में अच्छा जीवन जीने के लिए दुर्जनों से दूर रहना जितना जरूरी है, उससे कहीं ज्यादा जरूरी है सज्जनों के समीप रहना। अतः लोगों को यहाँ इन दोनों ही प्रकार के लोगों की पहचान अवश्य ही होनी चाहिए।

अपने इसी विचार के अनुसार मैंने जब सज्जनाचरितम् की सर्जना का 'श्रीगणेश' करना चाहा, तो मेरे पुस्तक-प्रकाशक के यहाँ से मेरे निर्वेदननिर्झरिणी नामक कथाकाव्य का अति जटिल पहला प्रूफ पढ़े जाने और सुधार किए जाने के लिए आ गया; जिसने मेरा काफी समय ले लिया। खैर, उसको निबटाने के बाद दीपावली की अङ्गभूत यमद्वितीया, जिसे यहाँ समाज में भैयादूज भी कहा जाता है, विक्रम संवत् २०६६, सोमवार के दिन, तदनुसार दिनाङ्क १९ अक्टूबर, सन् २००९ ईशवीय के दिन, मैंने इसका शुभारम्भ उत्साहपूर्वक कर दिया। किन्तु दो दिन बाद ही मेरे वाल्मीकिसम्भवम् नामक दृश्यकाव्य का भी पहला प्रूफ पढ़े जाने और सुधार किए जाने के लिए आ पहुँचा। फलस्वरूप सज्जनाचरितम् की सर्जना का सद्योजात शुभारम्भ बाधित हो गया। क्योंकि

सूचीकटाहन्याय के अनुसार मुझे प्रूफरीडिंग का काम पहले निबटाना पड़ा। उसको निबटाने में भी काफी समय लग गया और नवम्बर का महीना निकल गया। तत्पश्चात् दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में मैंने अपने सज्जनाचरितम् की रचना के रुके काम को आगे बढ़ाया; और फिर ईश्वर की कृपा से निरन्तर बढ़ता हुआ यह कार्य मकर सङ्क्रान्ति, विक्रम संवत् २०६६, तदनुसार गुरुवार, १४ जनवरी, सन् २०१० ईशवीय, के दिन पूर्णता को प्राप्त हो गया। उल्लेखनीय है कि सज्जनाचरितम् नामक यह काव्य मेरी संस्कृतसाहित्योपासना की बेल में विकसित हुआ उन्तीसवाँ पुष्प है। इसके बाद, भारतीय समाज में अपने इस काव्य की भी पैठ को बढ़ाने के उद्देश्य से मैंने इसका भी हिन्दी-भाषा में अनुवाद शुरू किया; जो जल्दी ही पूरा हो गया।

हे सहृदय पाठकजनों! जिस प्रकार नदियाँ अपने पानी के विषय में, लताएँ अपने फूलों के विषय में, कोयलें अपनी तान के विषय में स्वयं कुछ नहीं कहती हैं; और वृक्ष अपने फलों के विषय में, मोर अपनी कूक या नृत्य के विषय में तथा पर्वत अपनी सम्पदा के विषय में स्वयं कुछ नहीं कहते हैं; उसी प्रकार मैं भी अपनी काव्य-रचना के विषय में स्वयं कुछ नहीं कहता हूँ। इसीलिए मैंने यहाँ अपने इस सज्जनाचरितम् नामक काव्य के विषय में भी कुछ कहना उचित नहीं समझा है। मेरे विचार से यह काम तो अब साहित्य-जगत् के सुधी एवं सहृदय समीक्षकों का है; जिसे वे समय-समय पर करते या कराते ही हैं; तथा करेंगे या कराएँगे ही; तो फिर भला मैं क्यों अपनी सन्तानों की तारीफों के खुद पुल बाँधनेवाले आजकल के पिताओं की फौज में शामिल होऊँ?

ध्यातव्य है कि मेरी पाँच रचनाओं के अलावा अन्य सभी रचनाओं की भाँति यह रचना भी ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली नामक ख्यातिप्राप्त संस्कृत-पुस्तक-प्रकाशन-संस्था से ही प्रकाशित हो रही है। इस संस्था के स्वामिद्वय, श्री रवि मल्होत्रा एवं श्री दीपक मल्होत्रा, इसे भी बड़े ही उत्साह के साथ सुरुचिपूर्वक प्रकाशित कर रहे हैं। इसके लिए मैं उन्हें हार्दिक धन्यवाद देता हूँ; और उनकी तथा उनके सम्पूर्ण संयुक्त परिवार की सुख-समृद्धि की कामना करता हूँ। निश्चय ही ये दोनों भाई अपने अनेक अच्छे गुणों के कारण मेरे हार्दिक साधुवाद एवं हार्दिक शुभाशीर्वाद के अनुपम पात्र हैं।

हालाँकि अपनी अन्य रचनाओं की भाँति इस रचना को भी शत-प्रतिशत शुद्ध छपवाने के लिए मेरे द्वारा पर्याप्त प्रयास किए जाएँगे, लेकिन फिर भी इसमें किसी भी स्तर पर जन्म पा सकनेवाली अशुद्धियों की सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता है। उस परिस्थिति में निरुपाय हुआ मैं अपने प्रबुद्ध एवं सहृदय पाठकजनों से अपने लिए क्षमा का ही दान चाहूँगा।

कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल (उत्तराखण्ड) के संस्कृत-विभाग की अध्यक्ष, प्रोफेसर डॉक्टर किरण टण्डन (एम. ए., साहित्याचार्य, पीएच.डी., डी.लिट्.) ने अपनी विभागीय-कार्य-व्यस्तता के बावजूद भी इस रचना को भी छपाने के लिए अपेक्षित इसकी प्रेसकॉपी तैयार करने में मेरी बहुत सहायता की है। इतना ही नहीं, बल्कि इसकी पक्की जिल्द की जैकेट पर छपने के लिए अपेक्षित, इसका संक्षिप्त परिचय भी लिख देने की उन्होंने कृपा की है। अतः इस सबके लिए मैं उनके प्रति अपना हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ; उन्हें हार्दिक धन्यवाद देता हूँ; और ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि सारस्वत जगत् में उनका सम्मान बढ़ता रहे।

अब मैं अपनी इन्हीं कतिपय भावनाओं के साथ अपने इस सज्जनाचरितम् नामक काव्य को अपने संस्कृत-जगत् के तथा सम्पूर्ण मानव-समाज के सुधी, स्वाध्यायशील एवं सहृदय पाठकजनों के कर-कमलों में सौंपता हूँ; और आशा करता हूँ कि वे इसे पसन्द करेंगे। यदि उन्हें यह अच्छा लगा; तथा इससे मानव-समाज में सज्जनता का ज़रा भी आदर बढ़ा और विकास हुआ; तो मैं इसकी सर्जना में किए गए अपने परिश्रम को सार्थक एवं सफल समझ लूँगा।

—हरि नारायण दीक्षित

दिनाङ्क—

मङ्गलवार, २० अप्रैल, २०१० ई०

आवास—

१९६, बड़ा बाजार, मल्लीताल,

नैनीताल-१ (उत्तराखण्ड)।

दूरभाष-०५९४२-२३६९८१

अथ
डॉक्टरहरिनारायणदीक्षितविरचितं
सज्जनाचरितं नाम काव्यं
प्रारभ्यते

(१)

कुञ्जरवदनं देवं
 शम्भुगणानां पतिं गणपतिं गौरम् ।
 विघ्नहरं भक्तानां
 प्रभुं गणेशं नमामि पूर्वं पूज्यम् ॥

(२)

ऋद्धि-सिद्धि-दातारं
 चतुरवरिष्ठं स्वभक्त-हितकर्तारम् ।
 नगपति-तनुजा-तनुजं
 मङ्गलकोषं कृपापयोधिं वन्दे ॥

(३)

पुनरद्याहं नत्वा
 गौरीतनयं करोमि रचनां नव्याम् ।
 आशासे चैनामपि
 पूर्त्तिं नेष्यति सुखं यथाशीघ्रं सः ॥

(४)

वीणापाणिं वाणीं

श्रद्धापूर्वं नमामि नवकृतिकामः ।

जनयेद् भावतरङ्गा-

निह मम चेतसि दयावती देवी सा ॥

(५)

नौमि मरालारूढां

वाचां देवीं सरस्वतीति ख्याताम् ।

क्रियमाणेऽस्मिन् काव्ये

भरतु सरसतां सचेतसां तोषार्थम् ॥

(६)

यस्याः कृपया लोके

भवति जनानां कषायवागपि हृद्या ।

वन्दे तां वाग्देवीं

निजकाव्य-कषायदोष-परिहारार्थम् ॥

(७)

नौम्यथ निजगुरुदेवं

मम हितकामं यशोऽवशेषं लोके ।

याचे चामुं कृपया

काव्यमिदं मे प्रपूरयेत्सविशेषम् ॥

(८)

मयका यदीयकृपया

पदमुपलब्धं यशश्च विपुलं लोके ।

स्वामिनममुं गुरुं स्वं

विद्यानन्दं नमाम्यहं कृति-पूतये ॥

(९)

यद्यपि तस्य गतस्य

प्रभूतसमयो व्यतीतवान् वसुधायाः ।

पुनरपि मम चित्तेऽसौ

निवसति रक्षति सदा च मापायेभ्यः ॥

(१०)

अथ मम संस्मृतिपटले
 प्रकटति शनकैर्मदीयजननी माता ।
 स्मृत्वा तद्-वात्सल्यं
 भूयो भूयो भवामि तत्पादालिः ॥

(११)

मद्धित-चिन्तन-मग्ना
 यासीत्स्वीये तनुत्यजनकालेऽपि ।
 तस्यास्तद् वात्सल्यं
 स्वीयं निधिमिव निरन्तरं मन्येऽहम् ॥

(१२)

प्रत्येमि दास्यतेऽसौ
 स्वाशीर्वादं मदीयकृतिपूर्त्यर्थम् ।
 निजसुत-शुभसङ्कल्पं
 सदा सुमाता दिदृक्षते सम्पूर्णम् ॥

(१३)

अथाहं दीक्षितोपाख्यो

हरिनारायणाभिधः ।

सज्जनाचरितं नाम

काव्यं कुर्वे मनोरमम् ॥

(१४)

समाजोपवने ज्ञेयाः

सज्जनाः पुष्पसन्निभाः ।

स्वाचार-सौरभेणामी

सुखयन्ति जनान् सदा ॥

(१५)

पुण्यकारककर्माणि

कुर्वन्तस्ते स्वजीवने ।

उपार्जन्ते सदा पुण्यं

प्रेरयन्त्यपरानपि ॥

(१६)

उपकुर्वन्ति ते लोकान्
 उपकार-परायणाः ।
 सर्वेषां हि यथाशक्ति
 कष्टं निवारयन्त्यमी ॥

(१७)

उपकारं विधायामी
 न वाचा व्याहरन्ति तम् ।
 उपकृतं जनं क्वापि
 ह्येपयन्ति न सज्जनाः ॥

(१८)

परगुणं तिलाकारं
 ते मन्यन्ते नगोपमम् ।
 स्वगुणं च नगाकारं
 ते मन्यन्ते तिलोपमम् ॥

(१९)

परदुःखेषु दूयन्ते
 सज्जना हृदये निजे ।
 मोदन्ते चान्यसौख्येषु
 प्रशस्तहृदया अमी ॥

(२०)

चित्ते च वचने कार्ये
 साम्यं बिभ्रति सज्जनाः ।
 छलं छद्म च कापट्यं
 लभते तेषु नो पदम् ॥

(२१)

न पदस्य न विद्याया
 न जातेर्न च सम्पदः ।
 न शक्तेर्न तपस्यायाः

सज्जने जायते मदः ॥

(२२)

नेर्ष्यन्ति नाप्यसूयन्ति

कस्मैचिदपि सज्जनाः ।

द्रोहो द्वेषोऽथवा वैरं

तेषां चित्ते न जायते ॥

(२३)

नैव दम्भाभिमानाभ्यां

पुण्यकर्माणि सज्जनाः ।

कुर्वन्ति जीवने स्वीये;

पुण्यप्रिया हि सन्त्यमी ॥

(२४)

सामाजिकेषु कार्येषु

सहयोगाय संस्थिताः ।

स्वीयोऽयं परकीयोऽयं

चिन्तयन्ति न सज्जनाः ॥

(२५)

अपरोक्षे परोक्षे वा

मनसा वचसा च वा ।

सज्जना नापमन्यन्ते

कमपीह जनं क्वचित् ॥

(२६)

स्वार्थं विना सदा सर्वान्

उपकुर्वन्ति सज्जनाः ।

भानुर्भासयते सर्वान्

भेदभावं विना भुवि ॥

(२७)

अन्येषामपि सम्पत्तिं

सम्मानं चोन्नतिं गुणान् ।

सौख्यं विलोक्य विन्दन्तः

प्रीयन्ते हृदि सज्जनाः ॥

(२८)

स्वीयया विद्यया लोके

विवदन्ते न सज्जनाः ।

तथा ते नापमन्यन्ते

स्वल्पज्ञांश्चात्र मानवान् ॥

(२९)

जातिं धर्मं तथा क्षेत्रं

चित्ते विचार्य्य सज्जनाः ।

पक्षपातं न कुर्वन्ति;

सज्जनाः समदर्शनाः ॥

(३०)

हीनानपि न पश्यन्ति

सज्जना हीनया दृशा ।

आद्रियन्ते मनुष्यत्वं

सदा सर्वत्र सज्जनाः ॥

(३१)

समाजे साज्जनी मैत्री
वीक्षिता वृद्धिशालिनी ।
याम्यायने यथा सूर्ये
वृद्धिं गच्छति यामिनी ॥

(३२)

सज्जना न चिरायन्ते
क्षमादाने क्षमार्थिने ।
छायाकामाय पान्थाय
छायादाने यथा वटः ॥

(३३)

कस्मैचिन्नैव कुप्यन्ति
चिरकालाय सज्जनाः ।
तप्तीभवन्ति नैवापो
बहुकालाय कर्हिचित् ॥

(३४)

कर्त्तव्यकरणं लोके
 मर्यादानां च पालनम् ।
 सज्जना एव जानन्ति
 करालेऽस्मिन् कलौ युगे ॥

(३५)

विद्यामवाप्य लोकेऽस्मिन्
 नम्रा भवन्ति सज्जनाः ।
 न गर्वो न मदस्तेषु
 कदाचिज्जायते तया ॥

(३६)

धनं मानं पदं लब्ध्वा
 नम्रास्तिष्ठन्ति सज्जनाः ।
 न माद्यन्ति न गर्वन्ति;

कर्म कुर्वन्ति निष्ठया ॥

(३७)

सज्जनाः शिवसङ्कल्पाः

शिवकर्मपरायणाः ।

विप्रियं नैव कुर्वन्ति

विप्रियकारिणामपि ॥

(३८)

शठे शाठ्यमिमां नीतिं

मन्यन्ते नहि सज्जनाः ।

हृदये जायते तेषां

न प्रतिकार-भावना ॥

(३९)

कस्याप्यभ्युदयेनात्र

दूयन्ते नहि सज्जनाः ।

स्वकीयामन्यदीयां च

न स्थितिं तोलयन्त्यमी ॥

(४०)

बुभुक्षां समुपेक्ष्य स्वां
 क्षुधमन्यस्य भीषणाम् ।
 निवारयन्ति सानन्दं
 सज्जनास्त्यागमूर्त्तयः ॥

(४१)

परधर्मं न पश्यन्ति
 सज्जना हीनया दृशा ।
 धर्मं मनुष्यतामूलं
 मन्यन्ते हृदि सज्जनाः ॥

(४२)

परेषां संस्कृतिं लोके
 नैव निन्दन्ति सज्जनाः ।
 कालपक्वा यतो ह्येषा
 दुस्त्यजा पण्डितैरपि ॥

(४३)

अन्येषां सभ्यतां चापि
 गर्हन्ते नहि सज्जनाः ।
 सभ्यता सुविधापेक्षया
 तदियं परिवर्त्तिनी ॥

(४४)

उपेक्ष्यां नैव मन्यन्ते
 जातिं कामपि सज्जनाः ।
 समाजाभ्युदये सर्वाः
 महत्त्वं दधते हि ताः ॥

(४५)

धनवद्भ्यो न हीर्ष्यन्ति
 निर्धना अपि सज्जनाः ।
 प्रत्युत प्रभुदत्तेन
 तुष्यन्ति स्वधनेन ते ॥

(४६)

पर-प्रशस्तिमाकर्ण्य

ज्वरन्ति नहि सज्जनाः ।

प्रत्युतामी प्रसीदन्ति

प्रशंसन्ति च तं जनम् ॥

(४७)

अहितं नैव कुर्वन्ति

लोके कस्यापि सज्जनाः ।

मक्षिकापातनं क्षीरे

मन्यन्ते ते विगर्हितम् ॥

(४८)

वसन्ति सज्जना दूरे

पैशुन्यादिह सर्वथा ।

वपनं कलिबीजानां

पुण्यघ्नं ते हि मन्वते ॥

(४९)

धारयन्ति कृतज्ञत्वं
 सज्जना जीवनावधि ।
 निजोपकारिणां तेषां
 हितं चेच्छन्ति सर्वदा ॥

(५०)

उत्कोचं नैव गृह्णन्ति
 कस्माच्चिदपि सज्जनाः ।
 कर्तव्यं स्वं च कुर्वन्ति
 पूर्णया निष्ठया स्वया ॥

(५१)

उत्कोचाय न रुन्धन्ति
 कार्यं कस्यापि सज्जनाः ।
 यतोऽमी सर्वदोत्कोचं
 मन्यन्ते गरलोपमम् ॥

(५२)

अवैधाचरणं कृत्वा

धनं नार्जन्ति सज्जनाः ।

मलिनं न चिकीर्षन्ति

स्वात्मानं ते स्वजीवने ॥

(५३)

धर्मेण वर्जितं कामं

भुञ्जते नहि सज्जनाः ।

भञ्जन्ति ते न मर्यादां

मर्यादा-रक्षका हि ते ॥

(५४)

सज्जना नापमन्यन्ते

स्वीये संस्कृति-सभ्यते ।

सुधियो नावमन्यन्ते

मातरं स्वां च वल्लभाम् ॥

(५५)

सज्जना नैव कुर्वन्ति
मातापित्रोरनादरम् ।
श्रद्धया ते तयोः सेवां
विदधत्यर्चनामिव ॥

(५६)

सर्वान् गुरुजनान् स्वीयान्
आद्रियन्तेऽत्र सज्जनाः ।
सम्यग् जानन्ति ते लोके
मर्यादा-परिपालनम् ॥

(५७)

भ्रष्टाचारं दुराचारं
क्रूराचारं च वा क्वचित् ।
कस्याञ्चिदप्यवस्थायां
नैव कुर्वन्ति सज्जनाः ॥

(५८)

उपकर्तुं यथाशक्ति

सज्जन्ते सज्जनाः सदा ।

ईदृशेष्वेव लोकेषु

विद्यते लोक-संस्थितिः ॥

(५९)

साधयितुं स्ववैदुष्यं

समाजे जनसम्मुखे ।

कस्यापि नैव वैदुष्यं

दूषयन्त्यत्र सज्जनाः ॥

(६०)

सज्जनाः परुषां वाचं

ब्रुवन्ति नहि कञ्चन ।

वचोवज्र-प्रहारेणा-

मी निघ्नन्ति न कञ्चन ॥

(६१)

पुष्पान्ति गुणिनां पक्षं
 सज्जना इह सर्वदा ।
 कामयन्ते विकासं ते
 गुणानामेव केवलम् ॥

(६२)

सज्जना दुर्जनैर्दत्तां
 पीडां मृष्यन्ति दुस्सहाम् ।
 किन्तु ते गुणिनां पक्षं
 न त्यजन्ति कदाचन ॥

(६३)

सत्यप्रियाः सदाचाराः
 लोके भवन्ति सज्जनाः ।
 पतित्वा चासतां पक्षे

नात्मानं पातयन्त्यमी ॥

(६४)

सहन्ते दुर्जन-क्रोधं
 सज्जना निजजीवने ।
 किन्तु सज्जन-पक्षं ते
 न त्यजन्ति कदाचन ॥

(६५)

दधते हीनभावं नो
 नारीजनेऽत्र सज्जनाः ।
 व्यवहारं सदा सौम्यं
 साकं तेन च कुर्वते ॥

(६६)

माता स्नुषाः सुताः पत्नी
 स्वसारश्चाखिला इमाः ।
 वसन्ति प्रीतिमापन्नाः
 सदा सज्जन-सद्गति ॥

(६७)

दुहितृ-पुत्रयोर्भेदं
नैव कुर्वन्ति सज्जनाः ।
बुधा नेत्रे उभे स्वीये
समाने मन्वते सदा ॥

(६८)

पुत्रोद्वाहेऽत्र याचन्ते
यौतकं नैव सज्जनाः ।
सुतायां च स्नुषायां ते
भेदभावं न कुर्वते ॥

(६९)

सुताया भागधेयं यत्
स्वीयसम्पदि सिद्ध्यति ।
सहर्षं तद्विवाहे तत्

तस्मै यत्कृतिः सज्जनाः ॥

(७०)

स्वदोषान् नित्यमेकान्ते
 विचारयन्ति सज्जनाः ।
 तेभ्यश्च मुक्तिलाभार्थं
 यतन्ते प्रतिवासरम् ॥

(७१)

नैव कुर्वन्त्यहङ्कारं
 गुणेषु स्वेषु सज्जनाः ।
 तरवो नाभिमन्यन्ते
 निजायां फलसम्पदि ॥

(७२)

सज्जनाः सन्ति लोकेऽस्मिन्
 मरुभूमौ वटोपमाः ।
 आश्रमा इव कान्तारे

विपत्तौ बन्धुमन्तिभाः ॥

(७३)

वैरं धारयतां नित्यं

द्विषतामीर्ष्यतामपि ।

अहितं कुर्वतां चापि

हितमिच्छन्ति सज्जनाः ॥

(७४)

दुष्टाचारं समं दुष्टैः

कुर्वन्ति नहि सज्जनाः ।

शमयन्ति न धीमन्तो

मानवा अग्निमग्निना ॥

(७५)

परालय-प्रकाशाय

ध्वान्तस्था अपि सज्जनाः ।

नैवेर्ष्यन्ति क्षणायपि;

क्षुद्रतावर्जिता हि ते ॥

(७६)

आतिथेयस्य सम्पत्त्या

दूयन्ते नहि सज्जनाः ।

प्रत्युतामी प्रसीदन्ति;

न स्पृष्टा ईर्ष्या हि ते ॥

(७७)

स्वीयचित्ते परान्नाय

न स्पृहयन्ति सज्जनाः ।

स्वेनान्नेन च तृष्यन्ति

रूक्षशुष्केण तेऽनिशम् ॥

(७८)

निर्मलयन्ति पानीयं

यथा कतकरेणवः ।

स्वच्छयन्ति तथा लोकान्

सज्जना हितकारिणः ॥

(७९)

सज्जनाः साधुकर्माणः

कदापि निजजीवने ।

जनानां जीवनोद्याने

वपन्ति नहि कण्टकान् ॥

(८०)

सज्जनाः कार्यमन्येषां

विघ्नयन्ति न कर्हिचित् ।

बुधा अन्यहितक्षीरे

क्षिपन्ति नहि मक्षिकाम् ॥

(८१)

आत्मश्लाघां मनुष्येषु

कुर्वन्ति नहि सज्जनाः ।

बुधाः स्वकण्ठभूषायै

न निर्मान्ति सुमस्रजम् ॥

(८२)

सज्जनाः समताशीलाश्-
 चित्ते भवन्ति सर्वदा ।
 गर्वन्ति ते न सम्पत्तौ
 विलपन्ति न चापदि ॥

(८३)

उत्कर्षं सज्जना लोके
 प्राप्नुवन्ति यथा यथा ।
 वचनाचारयोर्नम्रा
 भवन्ति ते तथा तथा ॥

(८४)

फलभारेण जायन्ते
 नम्रा यथा महीरुहाः ।
 भवन्ति गुणभारेण
 नम्रास्तथैव सज्जनाः ॥

(८५)

सज्जनेभ्यो न रोचन्ते
जनानामश्रुबिन्दवः ।
रोचते च स्मितं तेभ्यो
वदने स्वरिपोरपि ॥

(८६)

भिक्षमाणान् शिशून् दृष्ट्वा
दूयन्ते हृदि सज्जनाः ।
भवन्तीमुन्नतिं राष्ट्रे
ते च पश्यन्ति शङ्कया ॥

(८७)

सज्जना हृदि दूयन्ते
दृष्ट्वा वृद्धानुपेक्षितान् ।
एतेनामी च मन्यन्ते
कम्पमानां स्वसंस्कृतिम् ॥

(८८)

समाजे गूढरूपेण

कन्या-भ्रूण-निपातनम् ।

कार्यमाणमनुश्रुत्य

व्यथन्ते हृदि सज्जनाः ॥

(८९)

पशूनां पक्षिणां हत्यां

लोकेऽस्मिन् धर्मनामनि ।

क्रियमाणां निशाम्यन्तो

दूयन्ते हृदि सज्जनाः ॥

(९०)

विलोक्य दुर्दशां लोके

सरसां सरितां तथा ।

भवन्ति व्यथिताश्चित्ते

सज्जनाः शुचिताप्रियाः ॥

(९१)

त्यक्त्वा मानवता-धर्मं
स्वस्व-धर्मस्य पुष्टये ।
विवदन्ते यदा लोका
दूयन्ते सज्जनास्तदा ॥

(९२)

लोके यौतक-लोभेन
वधूः कुत्रापि दाह्यते ।
यदा तदा विषीदन्ति
सज्जना हृदये भृशम् ॥

(९३)

लोपं नैतिकशिक्षायाः
शिक्षासंस्थासु सर्वतः ।
भवन्तं सज्जना दृष्ट्वा
बोभूयन्ते हि चिन्तिताः ॥

(९४)

तरुणाञ्जीविकाहीनान्

दृष्ट्वा सीदन्ति सज्जनाः ।

युवानो जीविकाहीना

राष्ट्राय नो शुभावहाः ॥

(९५)

सद्यसु यौतकाभावा-

दनूढा वीक्ष्य बालिकाः ।

तासां चैकाकितां दृष्ट्वा

खिद्यन्ते हृदि सज्जनाः ॥

(९६)

गेहेषु पितरौ वृद्धौ

प्रायः पुत्रैरुपेक्षितौ ।

स्वचित्ते खिद्यमानौ चा-

लोक्य सीदन्ति सज्जनाः ॥

(९७)

भिक्षमाणाञ्जनान् वृद्धान्
 दृष्ट्वा स्वोदरपूर्तये ।
 सज्जनास्तत्तनूजातान्
 धिक्-कुर्वन्ति निजात्मनि ॥

(९८)

शिक्षक-पदमारूढान्
 मूर्खानारक्षणाग्रहात् ।
 विलोक्य कुर्वते चिन्तां
 सज्जना योग्यताप्रियाः ॥

(९९)

अनूढा जीविकाहीना
 बाला दायविवर्जिताः ।
 गेहे च सेविकीभूता
 दृष्ट्वा सीदन्ति सज्जनाः ॥

(१००)

उपकृत्य जनं कञ्चिद्
 लोके नाख्यान्ति सज्जनाः ।
 अभिषिच्य कृषिं मेघा
 मौनं भजन्ति भूतले ॥

(१०१)

निजोपकारिणः पुंसो
 गुणान् गायन्ति सज्जनाः ।
 निपीय मधु रोलम्बाः
 कुर्वन्ति कुसुम-स्तुतिम् ॥

(१०२)

त्यजन्ति नहि सौजन्यं
 पीडिता अपि सज्जनाः ।
 छिन्नो भूत्वापि पाटीरो
 जहाति नहि सौरभम् ॥

(१०३)

अन्येषां वीक्ष्य साफल्यं
 नैवोच्छ्वसन्ति सज्जनाः ।
 सर्वं कर्मफलाधीनं
 मत्वा तुष्यन्ति ते हृदि ॥

(१०४)

विधाय स्वहितोपेक्षां
 विस्मृत्याशेषभिन्नताः ।
 कुर्वन्ति हितमन्येषां
 सज्जनाः साधुचेतसः ॥

(१०५)

अहिंसां परमं धर्मं
 मन्यन्ते हृदि सज्जनाः ।
 समाजे चात्र जीवन्ति
 सदा ते तत्पुरस्सरम् ॥

(१०६)

करालं पातकं हिंसां
 मन्यन्ते हृदि सज्जनाः ।
 आजीवनं ततो दूरे
 सदा च निवसन्त्यमी ॥

(१०७)

पुण्यं परोपकारोऽस्ति
 पापं च परपीडनम् ।
 इदं सदैव मन्वाना
 उपकुर्वन्ति सज्जनाः ॥

(१०८)

असत्याद् विजुगुप्सन्ते
 चित्ते सदैव सज्जनाः ।
 सत्यं वदेति वाक्ये ते
 नित्यं श्रद्धां च तन्वते ॥

(१०९)

अधर्मात् सन्ततं दूरे
निवसन्तीह सज्जनाः ।
धर्मं चरेति वाक्ये ते
सदा श्रद्धां च तन्वते ॥

(११०)

धर्मान्नैव प्रमाद्यन्ति
सज्जना निजजीवने ।
धर्मायामीह जीवन्ति
धर्मायासूंस्त्यजन्ति च ॥

(१११)

आत्मश्लाघां न कुर्वन्ति
कदाचिदपि सज्जनाः ।
प्रत्युतात्मगुणान् श्रुत्वा
त्रपन्ते ते निजात्मनि ॥

(११२)

कामात् क्रोधाच्च लोभाच्च

मोहान्मदाच्च मत्सरात् ।

सज्जनाः सरलात्मानो

दूरे वसन्ति सर्वदा ॥

(११३)

दुराचारात् कदाचाराद्

व्यभिचारात् सदैव च ।

भ्रष्टाचाराच्छलाचाराद्

दूरे वसन्ति सज्जनाः ॥

(११४)

स्वकीयां भोजनस्थालीं

परस्य क्षुन्निवृत्तये ।

समर्पयन्ति सोत्साहं

क्षुधिता अपि सज्जनाः ॥

(११५)

दम्भं द्रोहं च दर्पं च
 पक्षपातं च पैशुनम् ।
 ईर्ष्यां द्वेषं तथासूयां
 दूरात् त्यजन्ति सज्जनाः ॥

(११६)

उपहासं न कस्यापि
 लोके कुर्वन्ति सज्जनाः ।
 यतो गृह्णन्त्यमी शिक्षां
 महापूर्वक-भारतात् ॥

(११७)

क्वापि दीव्यन्ति नैवाक्षैः
 कदाचिदपि सज्जनाः ।
 यतो गृह्णन्त्यमी शिक्षां
 नलात् तथा युधिष्ठिरात् ॥

(११८)

सज्जना जीवने स्वीये
 भृशं भूत्वापि निर्धनाः ।
 नूनं न कुर्वते चेष्टा-
 मधर्म्यं धनमर्जितुम् ॥

(११९)

नार्जन्ति सज्जनाः पापं
 परिवार-समृद्धये ।
 मलिनयन्ति नात्मानं
 सज्जना देह-पुष्टये ॥

(१२०)

जनानामिह सर्वेषां
 स्वार्थं विनैव सज्जनाः ।
 बोभूयन्ते विना भेदं
 यावच्छक्यं सहायकाः ॥

(१२१)

शठे शाठ्यमिति न्यायं
मन्यन्ते नहि सज्जनाः ।
शमयन्त्यत्र ते वह्निं
वारिणा न तु वह्निना ॥

(१२२)

छिन्दन्ति सज्जना लोके
मायां मायाविनामपि ।
निजेनार्जव-खड्गेन;
कदापि न तु मायया ॥

(१२३)

सत्यानुसरणेनैव
स्वकीयं जीवनं सदा ।
यापयन्ति समाजेऽस्मिन्
सज्जनाः सत्यवादिनः ॥

(१२४)

असत्यभाषणं लोके

कुर्वते नात्र सज्जनाः ।

असत्यं मन्वते पापं

सत्यं च ते परं तपः ॥

(१२५)

पालयन्ति स्वकर्तव्यं

सज्जना निष्ठया सदा ।

कर्तव्यं मन्वते पूजां

यतस्ते निजमानसे ॥

(१२६)

न्याय्यं त्यजन्ति पन्थानं

नो कदाप्यत्र सज्जनाः ।

अन्याय्याच्च पथो दूरे

सर्वदा निवसन्त्यमी ॥

(१२७)

श्रद्धा क्षमा दया मैत्री

मुदिता शुचिता तथा ।

सर्वकालं वसन्त्येताः

सज्जन-चित्त-वृत्तिषु ॥

(१२८)

सहायो यस्य नो कश्चित्

सहायास्तस्य सज्जनाः ।

मुच्यते यो न कुत्रापि

सोऽपि काश्यां विमुच्यते ॥

(१२९)

सज्जनानां मतं चित्तं

हैयङ्गवीनसन्निभम् ।

अन्यदुःखाग्निसन्तापाद्

यद् द्रवतीह सत्वरम् ॥

(१३०)

सज्जना अन्य-साफल्यं
 पश्यन्ति नहि शङ्कया ।
 प्रत्युतामी प्रसीदन्ति
 गत्वा वर्धापयन्ति च ॥

(१३१)

परेषामायमालोक्य
 विषीदन्ति न सज्जनाः ।
 स्वीयेनायेन ते तस्य
 कुर्वन्ति तुलनां न च ॥

(१३२)

कमपीह जनं लोके
 तस्य मिथ्याप्रशंसया ।
 मुग्धचित्तं न कुर्वन्ति
 सज्जनाः स्वार्थपूर्तये ॥

(१३३)

केनापीह प्रलोभेन
 वादे न्यायालये क्वचित् ।
 मिथ्या-साक्ष्य-प्रदानार्थं
 सज्जन्ते नहि सज्जनाः ॥

(१३४)

कुर्वाणा अपि वाणिज्यं
 समाजे जीविकाकृते ।
 सज्जना धर्मवेत्तारो
 भवन्ति नहि वञ्चकाः ॥

(१३५)

न्यायालयेऽत्र वाक्कीला
 भूत्वाप्याजीविकाकृते ।
 मिथ्यावादस्य पक्षार्थं
 विवदन्ते न सज्जनाः ॥

(१३६)

उत्कोचं नैव गृह्णन्ति

न च यच्छन्ति सज्जनाः ।

विधिना सर्वकार्य्याणि

कुर्वन्ति कारयन्ति ते ॥

(१३७)

अर्थाय कल्यवर्त्ताय

विवदन्ते न सज्जनाः ।

सौमनस्यस्य रक्षार्थं

स्वार्थं त्यजन्ति सज्जनाः ॥

(१३८)

कोऽपि धर्मो मनुष्यत्वान्-

महीयान् नास्ति भूतले ।

इतीमां भावनां नित्यं

पोषयन्त्यत्र सज्जनाः ॥

(१३९)

मृत्युं स्वीयोत्तमर्णस्य

कामयन्ते न सज्जनाः ।

दित्सन्ते च यथाशक्ति

तद्-ऋणं शीघ्रमेव ते ॥

(१४०)

दशासु स्वासु सर्वासु

सज्जना हर्षपूर्वकम् ।

वहन्ति मृत्युपर्यन्तं

कार्तज्ञ्यं स्वोपकारिणाम् ॥

(१४१)

मया को भोजितोऽस्तीति

स्मरन्ति नहि सज्जनाः ।

केनाहं भोजितोऽस्मीति

स्मरन्ति सततं तु ते ॥

(१४२)

भूमौ सर्वेषु देशेषु
 धर्मेषु निखिलेषु च ।
 जातिषु चापि सर्वासु
 नूनं भवन्ति सज्जनाः ॥

(१४३)

कटुताजनकं सत्यं
 सत्यं सन्तापकारकम् ।
 कलेशचोत्पादकं सत्यं
 नोद्घाटयन्ति सज्जनाः ॥

(१४४)

अन्येषां निन्दितं वृत्तं
 नैवाख्यान्तीह सज्जनाः ।
 यावच्छक्यमुपेक्षन्ते

(१४५)

जनसेवां विना लोभं
सदा कुर्वन्ति सज्जनाः ।
तां कुर्वतस्तथा चान्यान्
वीक्ष्य हृष्यन्ति ते हृदि ॥

(१४६)

रमते जनसेवायां
सज्जनानां मनो भृशम् ।
जनसेवाममी चित्ते
मन्यन्ते प्रभुसेवनम् ॥

(१४७)

पदं धनं च लिप्सन्ते
ये जना जनसेवया ।
सज्जनास्ते न विज्ञेया

ज्ञेयास्ते जननायकाः ॥

(१४८)

उपकारं न कुर्वन्ति

व्यापारायात्र सज्जनाः ।

तं ते सदैव कुर्वन्ति

स्वान्तःसुखाय केवलम् ॥

(१४९)

सज्जनाः साधुसङ्काशा

उपकार-परायणाः ।

यत्र स्थाने वसन्त्येते

वर्धन्ते तत्र सम्मुदः ॥

(१५०)

क्षेत्र-जात्यादिवादानां

सूतानां स्वार्थिभिर्जनैः ।

वारणं सज्जना एव

कुर्वन्त्यत्र न संशयः ॥

(१५१)

भवन्ति' नैव दुर्भाग्यात्
समाजे यत्र सज्जनाः ।
व्यथते सर्वदा तस्मिन्
मानवता निरादृता ॥

(१५२)

गिरिभेदं वनच्छेदं
सज्जना नानुमन्वते ।
यतस्ते न बुभूषन्ति
प्रकृतेः कोपकारणम् ॥

(१५३)

पथि कञ्चिज्जनं दृष्ट्वा
स्खलितं कदल-त्वचः ।
शुभ-संस्कार-सम्पन्ना
हसन्ति नहि सज्जनाः ॥

(१५४)

बालकानां च कन्यानां
 निशम्य क्रय-विक्रयौ ।
 सज्जना हृदि खिद्यन्ते
 धिक्-कुर्वाणाः प्रशासनम् ॥

(१५५)

पशूनां पक्षिणां हत्यां
 विलोक्य हृदि सज्जनाः ।
 खिद्यन्ते बहु दूयन्ते
 शङ्कन्ते च मनुष्यताम् ॥

(१५६)

वर्धमानां समाजेऽस्मिन्
 सङ्ख्यामामिषभक्षिणाम् ।
 वीक्ष्य विस्मयमापन्नाश्-

चिन्तां कुर्वन्ति सज्जनाः ॥

(१५७)

महिलायां बलात्कारं

लोके निशम्य सज्जनाः ।

चिराय हृदि खिद्यन्ते

धिक्-कुर्वन्ति च पौरुषम् ॥

(१५८)

अनाथानां च दीनानां

करुणोच्छ्वास-वह्निना ।

हैयङ्गवीनचित्तत्वाद्

दुतं द्रवन्ति सज्जनाः ॥

(१५९)

ग्राम्यैरपि जनैः सार्धं

साध्वाचरन्ति सज्जनाः ।

अमूनमी न लोकन्ते

कदापि क्षुद्रया दृशा ॥

(१६०)

श्रमिणां स्वेदबिन्दूनां

मूल्यं जानन्ति सज्जनाः ।

ते बिन्दवस्तु तद्-दृष्टौ

मुक्ता अप्यतिशेरते ॥

(१६१)

काञ्चनस्य च कामस्य

युवसु युवतीषु च ।

प्राधान्यं वीक्ष्य लोकेऽस्मिन्

खिन्ना भवन्ति सज्जनाः ॥

(१६२)

छिन्नान् भिन्नान् परीवारान्

वृद्धांश्चात्मजवर्जितान् ।

संवीक्ष्य कुर्वते चिन्तां

सज्जना एव केवलाः ॥

(१६३)

दृष्ट्वा ज्वलन्त्यरण्यानि

निर्धनानां गृहाणि च ।

फलं तद्-भावि शोचन्तो

दूयन्ते बहु सज्जनाः ॥

(१६४)

कस्याश्चिदपि कन्याया

यौतक-पूर्त्यभावतः ।

निवृत्तौ वरयात्राया

व्यथन्ते बहु सज्जनाः ॥

(१६५)

मनुजान् मदिरामग्नान्

पतितान् वीक्ष्य वीथिषु ।

चिन्तयन्तो दशां तेषां

दूयन्ते हृदि सज्जनाः ॥

(१६६)

चरित्र-हननं लोके

कस्यापि स्वविपक्षिणः ।

सज्जना नैव कुर्वन्ति;

सन्दिशन्त्यशुभं न ते ॥

(१६७)

निर्बलानां दरिद्राणां

विपन्नानां च देहिनाम् ।

सज्जना एव जायन्ते

स्वाभाविकाः सहायकाः ॥

(१६८)

प्रतिवेशि-सुतं श्रुत्वा-

नुत्तीर्णं वाक्परीक्षणे ।

तद्-दुःख-दुःखितात्मानो

बोभुवत्यत्र सज्जनाः ॥

(१६९)

स्वजीवनान्निराशेभ्यो

वञ्चितेभ्यश्च दुर्जनैः ।

जनेभ्यः सज्जना धैर्यं

प्रयच्छन्त्यत्र सर्वथा ॥

(१७०)

जनानां पुत्रहीनानां

पुत्रीमतां सतामपि ।

हरन्ति सज्जना आधिं

सन्तति-साम्यमानिनः ॥

(१७१)

आत्मजा-स्नुषयोः साम्य-

मात्मजात्मजयोस्तथा ।

समाजे मनुजान् सर्वान्

शिक्षयन्त्यत्र सज्जनाः ॥

(१७२)

सज्जना एव रक्षन्ति
 मातृवन्निजसंस्कृतिम् ।
 अलङ्कुर्वन्त्यमी एव
 कान्तावच्च स्वसभ्यताम् ॥

(१७३)

ननान्दा न कलिं कुर्यात्
 सार्धं स्वभ्रातृजायया ।
 एष पाठोऽपि लोकेऽस्मिन्
 सज्जनैरेव पाठ्यते ॥

(१७४)

श्वश्रूमातृसमा वध्वा
 श्वश्र्वा वधूः सुतेव च ।
 ज्ञेयेति सुखदं पाठं
 पाठयन्त्येव सज्जनाः ॥

(१७५)

श्रयन्ति स्वप्रगत्यर्थं

स्वार्हतामेव सज्जनाः ।

नोपदां नैव ते वादान्

नोत्कोचं न च संस्तुतिम् ॥

(१७६)

रेल-यात्रां न कुर्वन्ति

सज्जनाष्टिकटं विना ।

भुञ्जते स्वं न गूहित्वा

क्वापि च प्रीतिभोजने ॥

(१७७)

न मनसा न वा वाचा

न च केनापि कर्मणा ।

कमपीह जनं लोके

वञ्चयन्ते हि सज्जनाः ॥

(१७८)

अस्मिन् समाज-कान्तारे
 सज्जनाश्चन्दनोपमाः ।
 स्वेनाचार-सुगन्धेना-
 शेषं सुगन्धयन्ति ये ॥

(१७९)

अस्मिन् समाज-कासारे
 दुर्जन-बक-सङ्कुले ।
 वसन्ति सज्जनाकारा
 हंसा अपि क्वचित् क्वचित् ॥

(१८०)

सज्जनास्तं प्रशंसन्ति
 यस्मिन् पश्यन्ति सद्-गुणान् ।
 जातिं लिङ्गं वयो धर्मं
 न च पश्यन्ति तस्य ते ॥

(१८१)

अभिवादनयोग्यानां

जनानामभिवादनात् ।

सज्जना न प्रमादयन्ति

कदापि निजजीवने ॥

(१८२)

जायया निर्मिते जाले

निपतन्ति न सज्जनाः ।

पितरौ नावमन्यन्ते

प्रेरिताश्चापि ते तथा ॥

(१८३)

विद्युच्चौर्यं न कुर्वन्ति

सज्जना निजसद्गुणि ।

जलं जीवनभूतं च

न ते दुरुपयुञ्जते ॥

(१८४)

सज्जना नहि कुर्वन्ति
 चौख्यं करस्य कस्यचित् ।
 भवन्ति राष्ट्र-कार्याणि
 करैरेतद् विदन्त्यमी ॥

(१८५)

क्षतिग्रस्तां न कुर्वन्ति
 सज्जना राष्ट्रसम्पदम् ।
 विजानन्ति यतस्ते तां
 स्वीय-सम्पत्ति-सन्निभाम् ॥

(१८६)

हितं राष्ट्रस्य मन्यन्ते
 सर्वोपरीह सज्जनाः ।
 कामयन्ते सदा तस्य
 प्रतिष्ठामुन्नतिं च ते ॥

(१८७)

पालितान् कुक्कुटान् स्वीयान्
 बद्ध्वा तत्पादयोः क्षुरम् ।
 उत्तेज्य सुरया चामून्
 योधयन्ति न सज्जनाः ॥

(१८८)

अश्वान् खरान् वृषादीन् वा
 लोभादुपेक्ष्य तद्-बलम् ।
 भूरि भारं यथाकामं
 वाहयन्ति न सज्जनाः ॥

(१८९)

भृत्येनापि स्वकीयेन
 गर्वादुपेक्ष्य तत्सुखम् ।
 कदापीहाधिकं कार्यं
 कारयन्ति न सज्जनाः ॥

(१९०)

ग्रामेषु कृषिकर्त्तृणां
 पुरेषु श्रमजीविनाम् ।
 सज्जना नैव कुर्वन्ति
 कदाचिदप्यनादरम् ॥

(१९१)

परुषां चाप्रियां वाचं
 श्रोत्रे पीडाप्रदायिनीम् ।
 लोके न ब्रुवते कञ्चित्
 सज्जना मृदुचेतसः ॥

(१९२)

सज्जना नैव काङ्क्षन्ति
 कुतोऽपि निजमादरम् ।
 किन्तु कुर्वन्ति सर्वेषा-

मनहङ्गारिणो हि ते ॥

(१९३)

अवकरं स्वसन्नोत्थं

सद्यसु प्रतिवेशिनाम् ।

सज्जनाः सदसद्विज्ञाः

क्षिपन्ति नहि कर्हिचित् ॥

(१९४)

उपकारि-जनं स्वीयं

विस्मरन्ति न सज्जनाः ।

स्वार्थाभावाद् भविष्येऽपि

ध्यायन्ति तं सदा च ते ॥

(१९५)

कृतज्ञोऽयं कृतघ्नोऽयं

नेदं पश्यन्ति सज्जनाः ।

भेदभावादृते यत्ते

सर्वानेवोपकुर्वते ॥

(१९६)

अपकारि-जनं स्वीयं
 सज्जना नापकुर्वते ।
 नोपसंहरतिच्छयां
 तरुस्त्वां छेतृ-मस्तकात् ॥

(१९७)

जनाः सौजन्य-सम्पन्नाः
 कदापि निज-जीवने ।
 नारीत्वं पुरुषत्वं वा
 न स्वं दुरुपयुज्जते ॥

(१९८)

उत्तमर्णाज्जनात् स्वीयाद्
 निलीयन्ते न सज्जनाः ।
 प्रत्युत प्रीणयन्तस्तं

साधयन्त्यात्म-सत्यताम् ॥

(१९९)

सज्जनैर्मन्यते माता

लोके सर्वातिशायिनी ।

तस्याः सम्मान-रक्षायै

त्यज्यते निखिलं च तैः ॥

(२००)

सज्जना मातरं स्वीयां

सुखयन्त्यत्र सर्वदा ।

मातरि देवता-वासं

मन्यन्तेऽमी दृढव्रताः ॥

(२०१)

पैतृकीं सम्पदं प्राप्तुं

कुचेष्टन्ते न सज्जनाः ।

क्रमेण स्वं समायातां

ते तां स्वीयां च मन्वते ॥

(२०२)

अज्ञानाद् विहितावज्ञा

मातापित्रोस्तथा गुरोः ।

सज्जनाः प्राप्य तद्-भानं

याचन्ते तौ क्षमां च तम् ॥

(२०३)

कस्यापीच्छन्ति नानिष्टं

क्षोभिता अपि सज्जनाः ।

तापं दत्ते न कस्मैचिन्-

मथितोऽपि सरोवरः ॥

(२०४)

कथ्यमाख्यान्ति सर्वेषां

गुह्यं गूहन्ति सज्जनाः ।

प्रकाशं दीपको दत्ते

तिमिरं च निगूहति ॥

(२०५)

विद्यां विना न सौजन्यं
वाक्यमेतन्न निर्मलम् ।
अबुधेष्वपि नैकेषु
सौजन्यमिह लभ्यते ॥

(२०६)

मत्ता भवन्ति सम्पत्तौ
विपत्तौ तु रुदन्ति ये ।
ये चेर्ष्यन्ति परोन्नत्यै
ते सन्ति नहि सज्जनाः ॥

(२०७)

धनं विद्या पदं कीर्तिर्-
मदयन्ति न सज्जनान् ।
केनापि ते न मूल्येन
विक्रीणते मनुष्यताम् ॥

(२०८)

निघ्नन्ति नैव विश्वासं
 लोके कस्यापि सज्जनाः ।
 विश्वास-हननं यत्ते
 मन्यन्ते जन-घातवत् ॥

(२०९)

वञ्चयित्वा जनानन्यान्
 सज्जना नो निजोन्नतिम् ।
 कुर्वते; मन्वते यत्ते
 वञ्चनां पापवीरुधम् ॥

(२१०)

आचारैः स्वैर्विचारैश्च
 वचनैश्चात्र सज्जनाः ।
 हितं सदैव कुर्वन्ति
 सर्वेषामेव देहिनाम् ॥

(२११)

हरन्ति श्रममन्येषां

श्रान्ताः सन्तोऽपि सज्जनाः ।

तापं हरन्ति पान्थानां

तप्ताः सन्तोऽपि भूरुहाः ॥

(२१२)

खेदं हरन्ति लोकानां

खिन्नाः सन्तोऽपि सज्जनाः ।

ददत्यर्थं दरिद्रेभ्यः

सन्तोऽप्यल्पधना अमी ॥

(२१३)

पालयन्ति वचः स्वीयं

क्षतिं सोढ्वापि सज्जनाः ।

अपीपलद् वचः स्वीयं

भीष्मो मृत्वा रणाजिरे ॥

(२१४)

निन्दकानामपि स्वेषां

श्रेयः कुर्वन्ति सज्जनाः ।

स्वेभ्यः प्रपीडकेभ्योऽपि

फलं यच्छन्ति भूरुहाः ॥

(२१५)

दुःख-ध्वान्ते प्रदीपन्ति

जलदन्ति मदानले ।

चिन्ता-रोगे च वैद्यन्ति

जनानामत्र सज्जनाः ॥

(२१६)

सूर्यन्ति कष्ट-शीतर्तौ

मयूरन्त्याधि-पन्नगे ।

नैराश्याब्धौ च पोतन्ति

जनानामत्र सज्जनाः ॥

(२१७)

सज्जना नैव चेष्टन्ते
जनयोः कलि-सृष्टये ।
रसाला नैव वाञ्छन्ति
कलहं पिक-कीरयोः ॥

(२१८)

सज्जना नावमन्यन्ते
मनुजान् हीनजातिजान् ।
सर्वानीश्वर-सन्तानान्
मन्यन्ते मानवानमी ॥

(२१९)

अखिलेष्वपि वर्णेषु
सर्वास्वपि च जातिषु ।
सर्वेषु च मनुष्येषु
सज्जनाः समदृष्टयः ॥

(२२०)

सज्जना नैव पश्यन्ति
 बालकान् हीनया दृशा ।
 समुदं ते च गृह्णन्ति
 तैरप्युक्तं सुभाषितम् ॥

(२२१)

देश-प्रबन्ध-कार्येषु
 नारीणामपि पात्रताम् ।
 नराणामिव सर्वत्रो-
 ररीकुर्वन्ति सज्जनाः ॥

(२२२)

उपकारं समाजेऽस्मिन्
 सज्जना एव कुर्वते ।
 तथा प्रत्युपकारं च
 सज्जना एव कुर्वते ॥

(२२३)

महिला यत्र मोदन्ते

रमन्ते तत्र सम्मुदः ।

इति भावं सदा चित्ते

वासयन्तेऽत्र सज्जनाः ॥

(२२४)

घोरेऽपि सङ्कटे प्राप्ते

विचलन्ति न सज्जनाः ।

वात्स्या-वेगे प्रचण्डेऽपि

न स्खलन्ति महीधराः ॥

(२२५)

जीवन्ति सज्जना लोके

भूत्वा निर्म्मलजीवनाः ।

यतस्ते जीवनान्निन्द्याद्

मन्यन्ते मरणं वरम् ॥

(२२६)

आश्रयन्तीह सन्मार्गं
 सज्जना निजजीवने ।
 न चाश्रयन्त्यसन्मार्गं
 ते स्वापेऽपि कदाचन ॥

(२२७)

सम्पत्तये प्रतिस्पर्धां
 नैव कुर्वन्ति सज्जनाः ।
 समाजे तेऽत्र चेष्टन्ते
 केवलां कीर्त्तिमर्जितुम् ॥

(२२८)

सज्जनानां क्रिया काचिद्
 दम्भाय नहि जायते ।
 पुण्यकामा जनाः सन्तो
 भवन्ति नहि दम्भकाः ॥

(२२९)

पशूनामपि वृद्धानां
 सेवां कुर्वन्ति सज्जनाः ।
 मातापितृगुरूणां तत्
 स्वकीयानां कथैव का ? ॥

(२३०)

विधाय सज्जनाः सेवां
 मातापित्रोस्तथा गुरोः ।
 तद्-ऋणेभ्योऽत्र निर्मुक्ता
 बुभूषन्ति स्वजीवने ॥

(२३१)

सज्जना नैव गृध्यन्ति
 कदापि पर-वस्तुषु ।
 चित्ते सदा च तुष्यन्ति
 प्रभुदत्तैः स्ववस्तुभिः ॥

(२३२)

पठित्वा च लिखित्वापि

गर्वन्ति नहि सज्जनाः ।

पुष्पित्वा च फलित्वापि

वृक्षा भवन्ति नोद्धताः ॥

(२३३)

लोकोपकार-वेलायां

विनमन्त्यत्र सज्जनाः ।

पृथिवीमुपकुर्वन्तो

वर्षन्तो वारिदा यथा ॥

(२३४)

सज्जनैः सृज्यते शक्तिसू-

सा दीनेषु जनेष्वपि ।

यया तैरपि लोकेऽस्मिन्

क्रियते स्वा समुन्नतिः ॥

(२३५)

सङ्कल्पितं निजं कार्यं
 पूरयन्त्येव सज्जनाः ।
 भगवांश्चापि तत्कार्ये
 करोति तत्सहायताम् ॥

(२३६)

तोषश्चित्ते स्मितं चास्ये
 मृदुता वचनेषु च ।
 सर्वकार्येष्वगोप्यत्वं
 सज्जनानामवाप्यते ॥

(२३७)

लोके कलियुगेऽप्यस्मिन्
 सज्जनानां पवित्रता ।
 चित्ते वचसि कार्ये चा-
 वासं विधाय तिष्ठति ॥

(२३८)

वने वने न पाटीरा

घट्टे घट्टे न साधवः ।

यथा; तथा कलावस्मिन्

गेहे गेहे न सज्जनाः ॥

(२३९)

सज्जनाः सर्वदा लोके

सखीयन्ते जनैः समम् ।

शिक्षयन्ते यथाशक्ति

सर्वाश्चामून् मनुष्यताम् ॥

(२४०)

उपेक्ष्य प्रकृतिं भूमौ

लोके चात्र मनुष्यताम् ।

सज्जना नैव मन्यन्ते

विकासकरणं शुभम् ॥

(२४१)

स्व-सौख्यार्थं जनानन्यान्
 दुःखयन्ति न सज्जनाः ।
 सज्जना न परोक्षेऽपि
 क्षतिं कस्यापि कुर्वते ॥

(२४२)

सज्जना धीरतानावा
 तरन्ति विपदापगाम् ।
 शाठ्ये छले बले कूटे
 विश्वसन्ति न सज्जनाः ॥

(२४३)

चित्ते न व्याकुलायन्ते
 क्लेशिता अपि सज्जनाः ।
 समाश्रित्य च धैर्यं ते
 यतन्ते क्लेशमुक्तये ॥

(२४४)

सज्जनेभ्योऽत्र पैशुन्यं
 कदापि नहि रोचते ।
 पैशुन्यं ते तु मन्यन्ते
 निगूढ-हननोपमम् ॥

(२४५)

सज्जना मन्वते मोहं
 मूलमत्राधिवीरुधाम् ।
 मोहमुक्ता जना लोके
 जीवन्ति विगताधयः ॥

(२४६)

सज्जना मन्वते लोभं
 जनकं व्याधि-वीरुधाम् ।
 त्यक्तलोभा जना लोके
 जीवन्ति प्रायशः सुखम् ॥

(२४७)

सज्जना मन्वते क्रोधं
बुद्धि-शक्ति-विघातकम् ।
परिहरन्ति तत्ते तं
यावच्छक्यं स्वजीवने ॥

(२४८)

वासयन्ते न मात्सर्यं
सज्जना निजमानसे ।
मन्यन्ते ते तु मात्सर्यं
भुजङ्गसदृशं सदा ॥

(२४९)

अहङ्कारं महाशत्रुं
मन्यन्ते हृदि सज्जनाः ।
वसत्येष जने यस्मिन्
निहन्ति तं शनैः शनैः ॥

(२५०)

सज्जनाः सन्त्यलङ्काराः

समाजस्य न संशयः ।

सरस्यो गिरयो नद्यो

भूमेर्वृक्षा लता यथा ॥

(२५१)

सत्कार्याश्चानुसर्त्तव्याः

सज्जना अखिलैर्जनैः ।

सुखी येनैष लोकस्स्या-

दित्यहं कामये हृदा ॥

इति

डॉक्टरहरिनारायणदीक्षितविरचितं

सज्जनाचरितं नाम काव्यं

समाप्तम् ॥

अथ
संक्षिप्तः कविपरिचयः



(१)

प्रदेशो भारते देशे

चकास्त्युत्तरपूर्वकः ।

अस्ति जनपदस्तस्मिन्

जालौनो नाम विश्रुतः ॥

(२)

तस्मिन् पदकुलानामा

ग्रामोऽस्त्येको मनोरमः ।

माता पिता च मे यस्मिन्-

नवात्तां सुखपूर्वकम् ॥

(३)

पितासीद् रघुवीरो मे

सहायान्तश्च दीक्षितः ।

कृषिमान् पण्डितो विप्रः

क्षेत्रे सर्वत्र पूजितः ॥

(४)

सुदामा नाम मातासीद्
 देव्यन्ता दीक्षिता च मे ।
 प्रियपुण्या च कर्मण्या
 दयालुर्दीन-दुःखिषु ॥

(५)

अनयोरेव पुत्रोऽहं
 हरिनारायणाभिधः ।
 रचितवानिदं काव्यं
 सज्जनाचरिताभिधम् ॥

(६)

दर्शं दर्शमिहाचारान्
 सज्जनानां समन्ततः ।
 तेषां महत्त्व-बोधार्थं
 काव्यमेतत् कृतं मया ॥

(७)

सज्जनानादरिष्यन्ते

जनाश्चेन्निजजीवने ।

सुखं शान्तिश्च तन्नूनं

सर्वत्र प्रसरिष्यतः ॥

(८)

ऋत्वृतु-व्योम-नेत्राख्ये

विक्रमादित्य-वत्सरे ।

दिने मकर-सङ्क्रान्तेः

काव्यमेतत् प्रपूर्यते ॥

(९)

सज्जनानां महत्त्वं चे-

देनेनात्र विवर्धते ।

तस्मै परिश्रमो नूनं

सफलोऽयं भविष्यति ॥

(१०)

विश्वविद्यालयान्नैनी-

तालस्थात् प्राप्तविश्रमः ।

संस्कृतं सेवमानोऽस्मि

नैनीताले वसन्नहम् ॥

(११)

मम काव्यं पठित्वेदं

प्रसन्नाः सज्जना मयि ।

भविष्यन्तीति विश्वासो

विद्यते मम मानसे ॥

इत्यत्र

डॉक्टरहरिनारायणदीक्षितविरचितं

संक्षिप्तकविपरिचयान्तं

सज्जनाचरितं नामेदं काव्यं

सम्पूर्णम् ॥

अथ
डॉक्टरहरिनारायणदीक्षितविरचित
सज्जनाचरितम् नामक काव्य
का
स्वोपज्ञ हिन्दी-अनुवाद



(१)

हाथी के मुँहवाले, भगवान् शङ्कर के गणों के स्वामी, इसीलिए गणपति कहे जानेवाले, गौर वर्णवाले, अपने भक्तजनों के कामों में आनेवाले विघ्नों को दूर करनेवाले, इसीलिए सबसे पहले पूजे जानेवाले देवता भगवान् श्रीगणेश जी को मैं प्रणाम करता हूँ।

(२)

ऋद्धियों और सिद्धियों के देनेवाले, चतुर-जनों में सबसे अधिक अच्छे, अपने भक्त-जनों का भला करनेवाले, उनके लिए सुख-सौभाग्य के खजाने बने हुए, कृपा के समुद्र बने हुए और पर्वतों के राजा हिमालय की पुत्री पार्वती के पुत्र के रूप में जन्मे श्रीगणेश जी की मैं वन्दना करता हूँ।

(३)

आज मैं गौरीपुत्र गणेश जी को प्रणाम करके फिर नए काव्य की रचना का प्रारम्भ कर रहा हूँ; और आशा कर रहा हूँ कि वे, अर्थात् श्री गणेश जी, मेरी इस रचना को भी यथाशीघ्र सुखपूर्वक पूर्ति की ओर ले जाएँगे।

(४)

नए काव्य की रचना करने की कामना करनेवाला मैं (हरिनारायण दीक्षित), अपने हाथ में वीणा को धारण करनेवाली, वाणी की देवी माता सरस्वती को श्रद्धापूर्वक प्रणाम करता हूँ। (चाहता हूँ कि) वे दयालु देवी मेरे इस दिल में भावनाओं की लहरों को उत्पन्न कर दें।

(५)

राजहंस पर बैठी हुई, संसार में सरस्वती के नाम से विख्यात हुई, वाणी की देवी को मैं नमन करता हूँ। (चाहता हूँ कि) वे मेरे द्वारा रचे जा रहे इस काव्य में सहृदय जनों की सन्तुष्टि के लिए सरसता को भर दें।

(६)

लोगों की कसैली वाणी भी जिनकी कृपा से संसार में हृदय को भाने वाली बन जाती है, उन वाग्देवी सरस्वती देवी की मैं अपने काव्य के कसैलेपन के दोष को दूर करवाने के लिए वन्दना करता हूँ।

अब मैं मेरा भला चाहनेवाले, समाज में यश के रूप में शेष रहे, अपने गुरुदेव को नमन करता हूँ; और उनसे याचना करता हूँ कि वे कृपा करके मेरे इस काव्य को विशेषतापूर्वक भलीभाँति पूरा करा दें।

जिनकी कृपा से मुझे समाज में प्रशस्त पद मिला; और पर्य्याप्त यश मिला; उन्हीं अपने गुरु महाराज, स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, को मैं अपनी इस रचना की पूर्ति के लिए प्रणाम करता हूँ।

हालाँकि इस धरती से गए-हुए उन्हें बहुत-सा समय बीत चुका है; लेकिन फिर भी वे मेरे चित्त में हमेशा निवास करते हैं; और हमेशा मुझे विमर्शियों से बचाते हैं।

(१०)

अब, मेरे यादों के झरोखे में, मुझे जन्म देनेवाली मेरी माँ (स्वर्गीया श्रीमती सुदामा देवी दीक्षित) धीरे से प्रकट हो रही हैं; और मैं उनके वात्सल्य को याद करके वारं वार उनके चरणकमलों का भ्रमर हो रहा हूँ।

(११)

जो अपने शरीर के त्याग के दिनों में भी मेरे हित को सोचने में डूबी रहती थीं; उनके उस अनुपम वात्सल्य को मैं हमेशा ही अपनी बहुमूल्य निधि के समान मानता हूँ।

(१२)

मैं विश्वास रखता हूँ कि वह मेरी माँ मेरे इस काव्य की पूर्ति के लिए मुझे अपना शुभाशीर्वाद अवश्य ही देंगीं। क्योंकि अच्छी माँ अपने बेटे के अच्छे संकल्प को हमेशा ही पूरा हुआ देखना चाहती है।

(१३)

अब, दीक्षित सरनेमवाला और हरिनारायण नामवाला मैं सज्जनाचरितम् नामवाले अपने इस मनोरम काव्य को शुरू करता हूँ।

(१४)

समाजरूपी उद्यान में सज्जन पुष्प-जैसे समझे जाने चाहिए। क्योंकि वे अपने आचरण की खुशबू से लोगों को हमेशा सुखी करते रहते हैं।

(१५)

वे, अर्थात् सज्जन, अपने जीवन में पुण्य को जन्म देनेवाले कार्यों को करते हुए हमेशा ही पुण्य को उपार्जित करते हैं; और ऐसा करते हुए वे लोग दूसरे लोगों को भी पुण्य का उपार्जन करने के लिए प्रेरित करते हैं।

(१६)

दूसरों का भला करने के स्वभाववाले वे लोग सभी लोगों का निश्चय ही यथाशक्ति उपकार करते हैं; तथा वे सभी के कष्ट को निश्चय ही यथाशक्ति दूर करते हैं।

(१७)

वे लोग किसी का कुछ उपकार करके उसे अपनी वाणी से बखानते नहीं हैं। सज्जन अपने द्वारा उपकृत किए गए व्यक्ति को कभी-कहीं लज्जित नहीं करते हैं।

(१८)

वे लोग, यानी अच्छे लोग, दूसरे व्यक्ति के तिल-जितने छोटे से गुण को भी पहाड़-जितना बड़ा मानते हैं; और वे अपने पहाड़-जितने बड़े गुण को भी तिल-जितना छोटा समझते हैं।

(१९)

सज्जन दूसरे लोगों के दुःख में अपने हृदय में दुःख का अनुभव करते हैं; और अच्छे हृदयवाले होने के कारण वे लोग दूसरे लोगों के सुख में खुशी का भी अनुभव करते हैं।

(२०)

सज्जन अपने चित्त में, अपनी वाणी में और अपने काम में एकरूपता रखते हैं। छल, छद्म और कपट को उनमें जगह नहीं मिलती है।

(२१)

सज्जन को न अपने पद का घमण्ड होता है; न अपनी विद्या का घमण्ड होता है; न अपनी जाति का घमण्ड होता है; न अपनी दौलत का घमण्ड होता है; न अपनी शक्ति का घमण्ड होता है; और न उसे अपनी तपस्या का घमण्ड होता है।

(२२)

सज्जन किसी भी व्यक्ति से न ईर्ष्या करते हैं; और ना ही वे किसी से असूया करते हैं। उनके चित्त में किसी के भी प्रति द्रोह, द्वेष या वैर की भावना पैदा नहीं होती है।

(२३)

सज्जन अपने जीवन में पुण्य के कामों को पाखण्ड और घमण्ड से नहीं किया करते हैं। क्योंकि उन्हें निश्चय ही पुण्य प्यारा होता है।

(२४)

समाज के हित के लिए किए जा रहे कार्यों को सम्पन्न कराने में सहयोग देने के लिए बैठे हुए सज्जन यह नहीं सोचा करते हैं कि यह व्यक्ति अपना है; और यह व्यक्ति पराया है।

(२५)

सज्जन यहाँ समाज में किसी भी व्यक्ति को पीठ-पीछे या सामने, वाणी से या/और मन से, कभी भी अपमानित नहीं किया करते हैं।

(२६)

सज्जन अपने किसी 'स्वार्थ' की पूर्ति की आशा के भाव के बिना ही हमेशा सभी को उपकृत किया करते हैं। सूरज पृथ्वी पर भेद-भाव के बिना ही सभी को आलोकित किया करता है।

(२७)

सज्जन दूसरे व्यक्तियों की भी सम्पत्ति को देखकर, गुणों को देखकर, सम्मान को देखकर और तरक्की को देखकर सुख को प्राप्त करते हुए अपने हृदय में प्रसन्न रहा करते हैं।

(२८)

सज्जन अपनी विद्या से समाज में विवाद नहीं किया करते हैं; और उससे वे यहाँ अपनी तुलना में कम जाननेवाले लोगों को अपमानित नहीं किया करते हैं।

(२९)

सज्जन अपने चित्त में किसी की जाति का विचार करके, किसी के धर्म का विचार करके तथा किसी के क्षेत्र का विचार करके उसके प्रति पक्षपात नहीं किया करते हैं। सज्जन समदर्शी होते हैं।

(३०)

सज्जन अपने से हीन लोगों को भी हीन दृष्टि से नहीं देखा करते हैं। सज्जन सभी अवसरों पर हमेशा ही इंसानियत का आदर किया करते हैं।

(३१)

समाज में सज्जनों की मित्रता हमेशा बढ़ती रहनेवाली देखी गई है; जिस प्रकार सूर्य के दक्षिणायन हो जाने पर रात बढ़ा करती है।

(३२)

क्षमा माँगनेवाले व्यक्ति को क्षमा प्रदान करने में सज्जन विलम्ब नहीं किया करते हैं; जिस प्रकार छाया चाहनेवाले राहगीर को छाया देने में वट-वृक्ष देरी नहीं किया करता है।

(३३)

सज्जन किसी भी व्यक्ति पर बहुत समय के लिए नाराज नहीं हुआ करते हैं। पानी कभी भी बहुत समय के लिए गर्म नहीं हुआ करता है।

(३४)

इस भीषण कलियुग में, समाज में अपने करने योग्य कार्य को करना और अपनी मर्यादाओं का परिपालन करना सज्जन ही जानते हैं।

(३५)

विद्या को पाकर सज्जन इस समाज में नम्र हो जाते हैं। उस विद्या से उन सज्जनों में न कभी घमण्ड पैदा होता है; और न कभी अहङ्कार पैदा होता है।

(३६)

सज्जन यहाँ समाज में धन को पाकर, पद को पाकर और सम्मान को पाकर भी नम्र ही रहते हैं। वे इस सब का न अभिमान करते हैं; और ना ही गर्व करते हैं। वे तो यहाँ निष्ठापूर्वक केवल अपना कर्म करते हैं।

(३७)

कल्याणकारी विचार रखनेवाले तथा कल्याणकारी कार्यों को सम्पन्न करने में लगे रहनेवाले सज्जन अपना अहित करनेवाले लोगों का भी अहित नहीं किया करते हैं।

(३८)

‘शठ के साथ शठता से व्यवहार करना चाहिए।’ इस नीति को सज्जन निश्चय ही नहीं माना करते हैं। क्योंकि उनके मन में बदला लेने की भावना पैदा नहीं होती है।

(३९)

सज्जन यहाँ किसी भी व्यक्ति की उन्नति से निश्चय ही दुःखी नहीं हुआ करते हैं। वे अपनी और दूसरे की हालत को तौला नहीं करते हैं।

(४०)

सज्जन त्याग की मूर्ति होते हैं। तभी तो वे अपनी भूख की पूरी तरह अनदेखी करके दूसरे की भीषण भूख को आनन्दपूर्वक दूर किया करते हैं।

(४१)

सज्जन दूसरे लोगों के धर्म को हीन दृष्टि से नहीं देखा करते हैं। क्योंकि प्रत्येक धर्म को सज्जन अपने हृदय में इंसानियत पर टिका हुआ माना करते हैं।

(४२)

समाज में सज्जन दूसरे लोगों की संस्कृति की निन्दा नहीं किया करते हैं। क्योंकि इसके बनने में बहुत समय लगता है; और इसीलिए इसे त्यागना समझदारों के लिए भी मुश्किल होता है।

(४३)

और, सज्जन दूसरों की सभ्यता की भी निन्दा निश्चय ही नहीं किया करते हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि सभ्यता तो सुविधा पर आधारित होती है; और इसीलिए यह परिवर्तनशील होती है।

(४४)

सज्जन यहाँ किसी भी जाति को, किसी भी वर्ग को उपेक्षा करने योग्य नहीं मानते हैं। क्योंकि समाज की उन्नति में उन सबका निश्चय ही, अपना-अपना महत्त्व होता है; अपना-अपना योगदान होता है।

(४५)

सज्जन गरीब होकर भी अमीर लोगों से निश्चय ही ईर्ष्या नहीं करते हैं। बल्कि भगवान् के दिए-हुए अपने धन से वे सन्तुष्ट रहा करते हैं।

(४६)

सज्जन दूसरे की प्रशंसा सुनकर निश्चय ही दुःखी नहीं होते हैं। बल्कि वे खुश होते हैं; और उसकी तारीफ़ करते हैं।

(४७)

समाज में सज्जन किसी का भी अहित नहीं किया करते हैं। क्योंकि वे किसी के दूध में या किसी की खीर में मक्खी डाल देने को निन्दित माना करते हैं।

(४८)

सज्जन यहाँ चुगलखोरी से पूरी तरह दूर रहते हैं। क्योंकि वे कलह के बीजों के बो देने को निश्चय ही पुण्य का नाश करनेवाला माना करते हैं।

(४९)

सज्जन ज़िन्दगी भर अहसान मानते हैं; और अपना उपकार करनेवाले उन लोगों का हमेशा ही भला चाहते हैं।

(५०)

सज्जन किसी भी व्यक्ति से घूस नहीं लिया करते हैं; और अपनी पूरी ईमानदारी से अपना कर्तव्य किया करते हैं।

(५१)

सज्जन किसी के भी काम को घूस खाने के लिए रोककर नहीं रखते हैं। क्योंकि घूस को तो वे हमेशा ही ज़हर के समान समझते हैं।

(५२)

सज्जन गैर-कानूनी काम करके धनोपार्जन नहीं किया करते हैं। क्योंकि वे अपने जीवन में अपनी आत्मा को मलिन नहीं करना चाहते हैं।

(५३)

सज्जन धर्म की मर्यादा से रहित काम-भाव का सेवन निश्चय ही नहीं किया करते हैं। वे मर्यादा को नहीं तोड़ते हैं। क्योंकि वे मर्यादा की रक्षा करनेवाले होते हैं।

(५४)

सज्जन अपनी संस्कृति का और अपनी सभ्यता का अपमान नहीं किया करते हैं। अच्छी बुद्धिवाले लोग अपनी माता का और अपनी पत्नी का अनादर नहीं किया करते हैं।

(५५)

सज्जन अपने माता-पिता का अनादर नहीं किया करते हैं। वे उन दोनों की सेवा, भगवान् की पूजा की तरह, श्रद्धापूर्वक किया करते हैं।

(५६)

सज्जन यहाँ अपने सभी गुरुजनों का आदर किया करते हैं। वे समाज में अपने सम्बन्धों की मर्यादाओं का परिपालन करना भलीभाँति जानते हैं।

(५७)

सज्जन किसी भी हालत में कहीं भी और कभी भी भ्रष्टाचार और / या दुराचार और / या कुराचार नहीं किया करते हैं।

(५८)

सज्जन यथाशक्ति परोपकार करने के लिए हमेशा ही तैयार रहते हैं। वास्तव में ऐसे ही परोपकारी लोगों के सहारे यह समाज टिका हुआ है।

(५९)

सज्जन यहाँ समाज में लोगों के सामने अपनी विद्वत्ता को सिद्ध करने के उद्देश्य से किसी भी दूसरे व्यक्ति की विद्वत्ता को दूषित नहीं किया करते हैं। अर्थात् उसके दोषों को उजागर नहीं किया करते हैं।

(६०)

सज्जन किसी भी व्यक्ति से कठोर वचन निश्चय ही नहीं बोला करते हैं। वे कठोर-वचनरूपी वज्र के प्रहार से किसी को भी मारा नहीं करते हैं।

(६१)

सज्जन यहाँ समाज में गुणी जनों के पक्ष को हमेशा ही पुष्ट किया करते हैं। क्योंकि वे यहाँ केवल गुणों का ही विकास चाहते हैं।

(६२)

सज्जन यहाँ दुष्ट लोगों द्वारा दी गई असहनीय तकलीफ़ को तो बर्दास्त कर लेते हैं; लेकिन वे गुणवान् लोगों की तरफ़दारी करना कभी नहीं त्यागते हैं।

(६३)

सज्जन यहाँ समाज में सत्य को पसन्द करनेवाले तथा अच्छा आचरण करनेवाले हुआ करते हैं; और वे दुर्जनों का पक्ष लेकर अपनी आत्मा को गिराया नहीं करते हैं।

(६४)

सज्जन अपने जीवन में दुर्जनों के क्रोध के कहर को तो सह लेते हैं; लेकिन वे सज्जनों के पक्ष को कभी नहीं त्यागते हैं।

(६५)

सज्जन यहाँ समाज में महिलाओं के प्रति अपने मन में हीन भाव नहीं रखा करते हैं; और उनके साथ हमेशा ही अच्छा व्यवहार किया करते हैं।

(६६)

माँ, बहुएँ, बेटियाँ, पत्नी और बहिनें; ये सभी भिन्न-भिन्न सम्बन्धोंवाली महिलाएँ यहाँ सज्जन के घर में हमेशा ही प्रसन्नतापूर्वक रहती हैं।

(६७)

सज्जन अपनी बेटी और अपने बेटे में भेद-भाव नहीं किया करते हैं। समझदार लोग अपनी दोनों आँखों को हमेशा समान समझते हैं।

(६८)

सज्जन यहाँ समाज में अपने बेटे के विवाह में वधू-पक्ष से दहेज नहीं माँगते हैं। वे अपनी बेटी और अपनी बहू में भेद-भाव नहीं किया करते हैं।

(६९)

अपनी सम्पत्ति में अपनी बेटी का जो हिस्सा बनता है, उसको सज्जन उसके विवाह के अवसर पर उसे प्रसन्नतापूर्वक दे देते हैं।

(७०)

सज्जन रोज़ाना एकान्त में बैठकर अपने दोषों के विषय में विचार किया करते हैं; और उनसे छुटकारा पाने के लिए प्रतिदिन प्रयत्न भी करते हैं।

(७१)

सज्जन अपने गुणों पर, अपनी अच्छाईयों पर घमण्ड नहीं किया करते हैं। वृक्ष अपनी फलों की सम्पत्ति पर अभिमान नहीं करते हैं।

(७२)

इस संसार में सज्जन, रेगिस्तान में बरगद के वृक्षों की तरह हैं; जङ्गल में आश्रमों की तरह हैं; और विपत्ति के दिनों में बन्धु-बान्धवों के समान हैं।

(७३)

लगातार दुश्मनी रखनेवाले, लगातार द्वेष करनेवाले, लगातार ईर्ष्या करनेवाले और लगातार अहित भी करते रहनेवाले लोगों का भी सज्जन हमेशा हित चाहा करते हैं।

(७४)

सज्जन, दुष्ट लोगों के साथ दुष्ट आचरण निश्चय ही नहीं किया करते हैं। बुद्धिमान् लोग आग को आग से नहीं बुझाया करते हैं।

(७५)

सज्जन अपने घर में अँधेरे में बैठे रहने के बावजूद भी दूसरों के घरों के उजाले से पल भर के लिए भी ईर्ष्या नहीं करते हैं। क्योंकि निश्चय ही वे लोग ओछेपन से रहित हुआ करते हैं।

(७६)

सज्जन अपने मेजबान की सम्पत्ति को देखकर अपने मन में दुःखी नहीं होते हैं; बल्कि वे खुश होते हैं। क्योंकि निश्चय ही वे ईर्ष्या के भाव से अनछुए होते हैं।

(७७)

सज्जन अपने मन में दूसरों के अन्न के लिए लालसा नहीं रखते हैं; और वे अपने रूखे-सूखे अन्न से हमेशा तृप्त रहा करते हैं।

(७८)

जिस प्रकार रीठे के दाने पानी को साफ़-सुथरा बना दिया करते हैं; उसी प्रकार हित करनेवाले सज्जन यहाँ लोगों को निर्दोष बनाया करते हैं।

(७९)

परोपकार के कामों को करनेवाले सज्जन अपनी जिन्दगी में दूसरे लोगों के जीवन की बगिया में निश्चय ही कभी काँटे नहीं बोया करते हैं।

(८०)

सज्जन दूसरे लोगों के बनते हुए काम में विघ्न कभी नहीं डालते हैं। समझदार लोग दूसरों के हितरूपी दूध में मक्खी नहीं डाला करते हैं।

(८१)

सज्जन यहाँ लोगों के बीच में आत्म-प्रशंसा नहीं किया करते हैं; अर्थात् अपने मुँह मियाँ मिट्टू नहीं बना करते हैं। समझदार लोग अपने गले की सजावट के लिए फूलों की माला खुद नहीं बनाया करते हैं।

(८२)

सज्जन हमेशा ही अपने मन में समान रहने के स्वभाववाले होते हैं। वे न तो सम्पत्ति मिल जाने पर घमण्ड करते हैं; और ना ही आफ़त आ जाने पर रोते-विलखते हैं।

(८३)

समाज में सज्जन ज्यों-ज्यों उन्नति को प्राप्त करते जाते हैं; त्यों-त्यों वे अपनी वाणी में और अपने आचरण में नम्र होते जाते हैं।

(८४)

जिस प्रकार वृक्ष अपने फलों के बोझ से झुक जाते हैं; उसी प्रकार सज्जन अपने गुणों के भार से नम्र हो जाते हैं।

(८५)

लोगों के आँसुओं की बूँदें सज्जनों को अच्छी नहीं लगती हैं।
लेकिन मुस्कान उन्हें अपने दुश्मन के भी चेहरे पर अच्छी लगती है।

(८६)

भीख माँगते हुए बच्चों को देखकर सज्जन अपने हृदय में
दुःख का अनुभव किया करते हैं; और वे राष्ट्र में हो रही तथाकथित
उन्नति को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं।

(८७)

वृद्ध जनों को उनके उत्तराधिकारियों द्वारा उपेक्षित किया गया
देखकर सज्जन अपने दिल में दुःख का अनुभव करते हैं; और
इससे वे अपनी संस्कृति को काँपती हुई, यानी कमजोर होती हुई,
मानते हैं।

(८८)

समाज में छिपे तौर से कराए जा रहे, कन्या-भ्रूणों के गिराने के कुकृत्य को सुनकर सज्जन अपने हृदय में व्यथित होते हैं।

(८९)

इस समाज में धर्म के नाम पर की जा रही, पशुओं की और पक्षियों की हत्या को सुनते हुए सज्जन अपने हृदय में दुःख का अनुभव करते हैं।

(९०)

पवित्रता को पसन्द करनेवाले सज्जन यहाँ समाज में नदियों की और सरोवरों की दुर्दशा को देखकर अपने हृदय में व्यथा का अनुभव करते हैं।

(९१)

जब लोग अपनी इंसानियत के धर्म को त्यागकर अपने-अपने धर्म को पुष्ट करने के लिए आपस में झगड़ा करते हैं, तब सज्जन दुःखी हुआ करते हैं।

(९२)

दहेज के लोभ के कारण जब समाज में कहीं कोई बहू जला दी जाती है; तब सज्जन अपने हृदय में अत्यधिक विषाद का अनुभव किया करते हैं।

(९३)

सब तरफ़ शिक्षण-संस्थाओं में नैतिक शिक्षा का, अर्थात् सदाचार की शिक्षा का; सब तरह से लोप होता हुआ देखकर सज्जन निश्चय ही बहुत चिन्तित होते हैं।

(९४)

आजीविकारहित नवयुवकों को देखकर सज्जन दुःखी हो जाया करते हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि आजीविकाहीन नवयुवक राष्ट्र के लिए कल्याणकारक नहीं होते हैं।

(९५)

दहेज दे पाने के सामर्थ्य के अभाव के कारण अविवाहित रही बालिकाओं को देखकर तथा घरों में उनके अकेलेपन को देखकर सज्जन अपने हृदय में खिन्नता का अनुभव किया करते हैं।

(९६)

घरों में पुत्रों द्वारा अक्सर उपेक्षित किए गए और इसीलिए अपने चित्त में खिन्न रहते हुए बूढ़े माता-पिता को देखकर सज्जन दुःखी हो जाया करते हैं।

(९७)

बूढ़े लोगों को अपना पेट भरने के लिए भीख माँगते हुए देखकर सज्जन अपने मन में उनके शरीर से पैदा हुए उनके बेटों को धिक्कारा करते हैं।

(९८)

सरकारी आरक्षण के बल पर शिक्षक के पद पर चढ़-बैठे मूर्ख लोगों को देखकर योग्यता को पसन्द करनेवाले सज्जन चिन्तित हो जाया करते हैं।

(९९)

अविवाहित, आजीविका से रहित, अपनी पैतृक सम्पत्ति से वञ्चित और घर में सभी की सेविका बनी हुई बालिकाओं को देखकर सज्जनों को दुःख का अनुभव हुआ करता है।

(१००)

सज्जन किसी व्यक्ति का उपकार करके समाज में उसका बखान नहीं किया करते हैं। बादल धरती पर खेती को सींचकर चुप हो जाया करते हैं।

(१०१)

सज्जन अपना उपकार करनेवाले व्यक्ति के गुणों को गाया करते हैं। भँवरे पराग को पीकर पुष्प की प्रशंसा किया करते हैं।

(१०२)

दुर्जनों के द्वारा सताए जाने के बावजूद भी सज्जन अपनी सज्जनता को निश्चय ही नहीं त्यागा करते हैं। चन्दन का वृक्ष कट जाने के बावजूद भी अपनी सुगन्ध को निश्चय ही नहीं त्यागता है।

(१०३)

दूसरे लोगों की सफलता को देखकर सज्जन उसाँसें नहीं भरा करते हैं। वे यहाँ सब कुछ अपने किए हुए कर्मों के फल के अनुसार मिलनेवाला मानकर अपने हृदय में सन्तुष्ट रहते हैं।

(१०४)

दयालु हृदयवाले सज्जन अपने हित की उपेक्षा करके सभी प्रकार के भेद-भावों को भूलकर दूसरे लोगों का हित कर दिया करते हैं।

(१०५)

सज्जन अपने हृदय में अहिंसा को सबसे बड़ा धर्म मानते हैं; और वे यहाँ इस समाज में हमेशा ही उसके साथ अपना जीवन जीते हैं।

(१०६)

सज्जन अपने हृदय में हिंसा को सबसे अधिक भयानक पाप समझते हैं; और इसीलिए वे जीवन भर हमेशा ही उससे दूर रहते हैं।

(१०७)

‘दूसरों का उपकार करना पुण्य है; और दूसरों को सताना पाप है।’ इस तथ्य को हमेशा ही मानते हुए सज्जन यहाँ हमेशा ही परोपकार किया करते हैं।

(१०८)

सज्जन अपने चित्त में असत्य से हमेशा ही घृणा करते हैं; और ‘सत्य बोलो।’ इस वचन पर वे निरन्तर श्रद्धा, यानी आस्था, रखते हैं।

(१०९)

सज्जन यहाँ अधर्म से निरन्तर दूर रहा करते हैं; और 'धर्म का आचरण करो।' इस वचन पर वे हमेशा श्रद्धा, अर्थात् आस्था, रखते हैं।

(११०)

सज्जन अपने जीवन में धर्म के प्रति लापरवाह नहीं हुआ करते हैं। वे यहाँ धर्म के लिए जीते हैं; और धर्म के लिए अपने प्राण भी त्याग देते हैं।

(१११)

सज्जन कभी भी अपनी प्रशंसा नहीं करते हैं। बल्कि अपने गुणों की प्रशंसा सुनकर वे अपने मन में लजा जाते हैं।

(११२)

सरल मनवाले सज्जन यहाँ कामभाव से, क्रोध से, लोभ से, मोह-माया से, मद से और मात्सर्य से हमेशा दूर रहा करते हैं।

(११३)

सज्जन यहाँ दुराचार से, कदाचार से, व्यभिचार से, भ्रष्टाचार से और छलाचार से हमेशा ही दूर रहा करते हैं।

(११४)

भूखे होने के बावजूद भी सज्जन दूसरे की भूख को शान्त करने के लिए अपनी भोजन की थाली को उत्साहपूर्वक समर्पित कर दिया करते हैं।

(११५)

सज्जन यहाँ अपने जीवन में दम्भ को, द्रोह को, दर्प को, पक्षपात को, चुगलखोरी को, ईर्ष्या को, द्वेष को तथा असूया को दूर से ही त्याग दिया करते हैं।

(११६)

सज्जन यहाँ समाज में किसी का भी उपहास नहीं किया करते हैं; यानी किसी की भी खिल्ली नहीं उड़ाया करते हैं। क्योंकि वे महाभारत से सीख ले लेते हैं।

(११७)

सज्जन यहाँ अपने जीवन में कभी भी, कहीं भी जुआ नहीं खेला करते हैं। क्योंकि वे इस विषय में राजा नल के जीवन से तथा राजा युधिष्ठिर के जीवन से शिक्षा ले लेते हैं।

(११८)

सज्जन अपने जीवन में अत्यधिक गरीब होने के बावजूद भी धन को अधर्मपूर्वक अर्जित करने के लिए निश्चय ही चेष्टा नहीं किया करते हैं।

(११९)

सज्जन अपने परिवार-जनों की सुख-समृद्धि के लिए पाप नहीं कमाया करते हैं। सज्जन अपने शरीर को पुष्ट करने के लिए अपनी आत्मा को मलिन नहीं बनाया करते हैं।

(१२०)

सज्जन यहाँ समाज में अपने किसी भी प्रयोजन के बिना ही सभी लोगों के, विना किसी भेद-भाव के, वारं वार यथाशक्ति सहायक हो जाया करते हैं।

(१२१)

‘शठ व्यक्ति के साथ शठतापूर्वक व्यवहार करना चाहिए।’
इस शिक्षा को यहाँ सज्जन निश्चय ही नहीं माना करते हैं। वे यहाँ
आग को पानी से बुझाया करते हैं; न कि आग से।

(१२२)

सज्जन यहाँ समाज में मायावी लोगों की भी माया को अपनी
सरलता की तलवार से ही काट करते हैं; न कि कभी माया से।

(१२३)

हमेशा ही सच बोलने के स्वभाववाले सज्जन यहाँ इस समाज
में अपना सारा जीवन हमेशा सच का अनुसरण करते हुए ही
बिताते हैं।

(१२४)

सज्जन यहाँ समाज में असत्य भाषण नहीं किया करते हैं।
 क्योंकि वे असत्य को पाप मानते हैं; और सत्य को सर्वोत्तम तप
 समझते हैं।

(१२५)

सज्जन अपने कर्तव्य का पालन हमेशा ही निष्ठापूर्वक किया
 करते हैं। क्योंकि वे अपने कर्तव्य को अपने मन में भगवान् की
 पूजा मानते हैं।

(१२६)

सज्जन यहाँ समाज में न्यायसङ्गत मार्ग को कभी भी नहीं
 त्यागते हैं; और अन्यायपूर्ण मार्ग से वे हमेशा ही दूर रहा करते
 हैं।

(१२७)

सज्जनों के चित्त की वृत्तियों में श्रद्धा, क्षमा, दया, मैत्री, मुदिता और शुचिता; ये सभी अच्छाईयाँ हमेशा ही रहा करती हैं।

(१२८)

यहाँ जिसका कोई सहायक नहीं होता है, सज्जन उसके सहायक हो जाया करते हैं। जो कहीं भी मुक्त नहीं होता है, काशी में वह भी विमुक्त हो जाता है।

(१२९)

सज्जनों का चित्त यहाँ ताजे मक्खन के समान माना जाता है; जो यहाँ दूसरे के दुःख की आग की गर्मी पाकर तेजी से पिघल जाता है।

(१३०)

सज्जन दूसरे की सफलता को सन्देह की दृष्टि से निश्चय ही नहीं देखा करते हैं। बल्कि वे खुश होते हैं; और जाकर उसे बधाई देते हैं।

(१३१)

सज्जन दूसरे लोगों की आमदनी को देखकर अपने मन में दुःखी नहीं हुआ करते हैं; और वे अपनी आमदनी से उसकी तुलना नहीं किया करते हैं।

(१३२)

सज्जन यहाँ समाज में स्वार्थ को, अर्थात् अपने किसी प्रयोजन को, पूरा करने के लिए किसी भी व्यक्ति को, उसकी झूठी तारीफ़ के द्वारा, मोहित नहीं किया करते हैं।

(१३३)

सज्जन यहाँ समाज में अदालत में चल रहे किसी भी मुक़दमे में झूठी ग़वाही देने के लिए किसी भी प्रलोभन से भी कभी भी निश्चय ही तैयार नहीं हुआ करते हैं।

(१३४)

धर्म को जाननेवाले सज्जन यहाँ समाज में अपनी आजीविका के लिए व्यापार करते हुए भी निश्चय ही ठग नहीं होते हैं।

(१३५)

सज्जन यहाँ समाज में अपनी आजीविका के लिए वकील होकर भी अदालत में किसी झूठे मुक़दमे की पैरबी, यानी तरफ़दारी, करने के लिए ज़िरह नहीं किया करते हैं।

(१३६)

सज्जन रिश्वत नहीं लिया करते हैं; और न दिया करते हैं। वे यहाँ सभी के सभी काम नियमानुसार करते हैं; और नियमानुसार ही कराते हैं।

(१३७)

सज्जन यहाँ क्षण में नष्ट हो जानेवाले तुच्छ धन के लिए आपस में झगड़ा नहीं किया करते हैं। सज्जन अपने मन की शान्ति तथा अपनी भल-मनसाहत की रक्षा के लिए अपने 'स्वार्थ' का त्याग कर दिया करते हैं।

(१३८)

'धरती पर कोई भी धर्म इंसानियत से बढ़कर नहीं है।' इस प्रकार की इस भावना को सज्जन यहाँ हमेशा ही पुष्ट किया करते हैं।

(१३९)

सज्जन यहाँ अपने ऋणदाता की मृत्यु की कामना नहीं किया करते हैं; और वे उसके ऋण को यथाशक्ति जल्दी ही लौटा देना चाहते हैं।

(१४०)

सज्जन यहाँ अपना उपकार करनेवाले लोगों के प्रति अपनी कृतज्ञता का भाव अपनी हर हालत में प्रसन्नतापूर्वक मरते दम तक रखा करते हैं।

(१४१)

‘मैंने किसे भोजन कराया है।’ इसकी याद सज्जन नहीं रखा करते हैं। लेकिन ‘किसने मुझे भोजन कराया है।’ इसकी याद वे हमेशा ही रखा करते हैं।

(१४२)

पृथिवी पर सभी देशों में, सभी धर्मों में और सभी जातियों में सज्जन निश्चय ही पाए जाते हैं।

(१४३)

कटुता पैदा करा देनेवाले सत्य का, दुःख देनेवाले सत्य का और कलह करा देनेवाले सत्य का उद्घाटन सज्जन नहीं किया करते हैं।

(१४४)

सज्जन यहाँ समाज में दूसरों के निन्दित वृत्तान्त का वर्णन नहीं किया करते हैं। और, दूसरे लोगों के द्वारा कहे जाने पर उसे वे यथासम्भव अनसुना कर दिया करते हैं।

(१४५)

सज्जन यहाँ समाज में जनता की सेवा हमेशा ही विना किसी लोभ के ही किया करते हैं। और, वे उसे उसी तरह करते हुए दूसरे लोगों को देखकर अपने हृदय में खुश हुआ करते हैं।

(१४६)

सज्जनों का मन जन-सेवा करने में बहुत खुश रहता है। क्योंकि जन-सेवा को वे लोग अपने चित्त में ईश्वर की सेवा माना करते हैं।

(१४७)

जो लोग यहाँ समाज में जन-सेवा के द्वारा पद को और धन को प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें सज्जन नहीं समझा जाना चाहिए; उन्हें तो जनता के नेता समझा जाना चाहिए।

(१४८)

सज्जन यहाँ अपने किसी भौतिक लाभ के लिए परोपकार नहीं किया करते हैं। वे हमेशा ही उसे केवल अपने अन्तःकरण के सुख के लिए करते हैं।

(१४९)

सज्जन यहाँ समाज में साधु-सन्तों के समान होते हैं। क्योंकि ये परोपकार करने में लगे रहते हैं। इस लिए ये जिस जगह रहते हैं, वहाँ खुशियों में वृद्धि होती है।

(१५०)

स्वार्थी लोगों द्वारा पैदा किए गए क्षेत्रवाद, जातिवाद बगैरह वादों का निवारण यहाँ सज्जन ही किया करते हैं; इसमें कोई सन्देह नहीं है।

(१५१)

जिस समाज में दुर्भाग्य से सज्जन नहीं होते हैं, उस में हर समय अपमानित होती हुई मानवता हमेशा ही व्यथा का अनुभव करती रहती है।

(१५२)

पहाड़ों को अन्धाधुन्ध तोड़ने का और जङ्गलों को अन्धाधुन्ध काटने का अनुमोदन सज्जन नहीं किया करते हैं। क्योंकि वे प्रकृति के कोप का कारण नहीं बनना चाहते हैं।

(१५३)

रास्ते में किसी व्यक्ति को केले के छिलके से फिसलकर गिरा हुआ देखकर सज्जन, अच्छे संस्कारों से सम्पन्न होने के कारण, निश्चय ही हँसा नहीं करते हैं।

(१५४)

बालकों की तथा कन्याओं की खरीद-फ़रोख़्त को सुनकर मन में प्रशासन को धिक्कारते हुए सज्जन खिन्न हो जाया करते हैं।

(१५५)

सज्जन यहाँ समाज में पशुओं की तथा पक्षियों की हत्या को देखकर अपने हृदय में बहुत खिन्न हुआ करते हैं; बहुत दुःखी हुआ करते हैं; और हत्या करनेवाले लोगों की इंसानियत को भी सन्देह की दृष्टि से देखा करते हैं।

(१५६)

इस समाज में मांस-भक्षण करनेवालों की संख्या को बढ़ती हुई देखकर ताज्जुब में पड़े हुए सज्जन चिन्तित रहा करते हैं।

(१५७)

सज्जन यहाँ समाज में किसी महिला पर किए गए बलात्कार की कुत्सित घटना को सुनकर अपने हृदय में बहुत समय तक खिन्न होते रहते हैं; और बलात्कारी के पौरुष को कोसते रहते हैं।

(१५८)

अनाथों तथा दीन-दुःखियों की करुणा से भरी उसाँसों की आग से सज्जन, ताजे मक्खन के समान कोमल चित्तवाले होने के कारण, जल्दी ही द्रवित हो जाया करते हैं।

(१५९)

सज्जन गाँवों के भी लोगों के साथ अच्छा व्यवहार किया करते हैं। उन्हें वे कभी भी ओछी नज़र से नहीं देखा करते हैं।

(१६०)

मेहनत से मजदूरी करनेवाले लोगों के पसीने की बूंदों की कीमत को सज्जन जानते हैं। क्योंकि वे बूँदें तो उनकी दृष्टि में मोतियों से भी ज़्यादा कीमती हुआ करती हैं।

(१६१)

सज्जन यहाँ समाज में युवकों में तथा युवतियों में धन-लोलुपता की तथा काम-लोलुपता की प्रधानता को देखकर अपने मन में खिन्नता का अनुभव किया करते हैं।

(१६२)

समाज में परिवारों को छिन्न-भिन्न हुआ देखकर और इसी के परिणामस्वरूप वृद्ध-जनों को भी उनके बेटों द्वारा त्यागा हुआ देखकर यहाँ केवल सज्जन ही उनके विषय में चिन्तित हुआ करते हैं।

(१६३)

जङ्गलों को तथा ग़रीबों के घरों को जलता हुआ देखकर उससे होनेवाले दुष्परिणाम पर शोक करते हुए सज्जन अपने चित्त में बहुत दुःखी हुआ करते हैं।

(१६४)

दहेज की पूर्ति न हो पाने के कारण यहाँ किसी भी कन्या की बारात के लौट जाने पर सज्जन बहुत व्यथित हुआ करते हैं।

(१६५)

शराब के नशे में डूबे हुए और इसीलिए गलियों में गिरे-पड़े हुए लोगों को देखकर उनकी दशा के विषय में सोचते हुए सज्जन अपने हृदय में दुःख का अनुभव किया करते हैं।

(१६६)

सज्जन यहाँ समाज में अपने किसी विरोधी व्यक्ति के भी चरित्र का हनन नहीं किया करते हैं। क्योंकि वे अशुभ सन्देश कभी नहीं देते हैं।

(१६७)

समाज में कमजोर लोगों के, गरीब लोगों के और मुसीबतज़दा लोगों के स्वाभाविक सहायक यहाँ सज्जन ही हुआ करते हैं।

(१६८)

अपने पड़ोसी के बेटे को किसी इण्टरव्यू में असफल हुआ सुनकर यहाँ सज्जन उसके दुःख से बहुत ही दुःखी हुई आत्मावाले हो जाया करते हैं।

(१६९)

अपने जीवन से निराश हो चुके तथा दुष्ट लोगों के द्वारा ठगे गए लोगों को यहाँ सज्जन सब तरह से धीरज बँधाते हैं।

(१७०)

पुत्रियों वाले होने के बावजूद भी पुत्रहीन लोगों के मन की पीड़ा को यहाँ सन्तानों में समानता माननेवाले सज्जन ही दूर किया करते हैं।

(१७१)

सज्जन यहाँ समाज में सभी लोगों को बेटी और बहू की समानता तथा बेटी और बेटे की समानता सिखाया करते हैं।

(१७२)

सज्जन ही यहाँ अपनी संस्कृति की रक्षा अपनी माता की रक्षा की तरह किया करते हैं। और, वे ही यहाँ अपनी सभ्यता को अपनी पत्नी की तरह सजाया करते हैं।

(१७३)

‘ननद को अपनी भाभी के साथ कलह नहीं करना चाहिए।’
इस पाठ को भी यहाँ समाज में सज्जन ही पढ़ाया करते हैं।

(१७४)

‘बहू को अपनी सास अपनी माँ के समान समझनी चाहिए;
और सास को अपनी बहू अपनी बेटी के समान समझनी चाहिए।’
इस प्रकार का सुखदायक पाठ यहाँ समाज में सज्जन ही पढ़ाया करते हैं।

(१७५)

सज्जन अपनी तरक्की के लिए केवल अपनी योग्यता का ही सहारा लेते हैं। इसके लिए वे न उपहार का सहारा लेते हैं; न जातिवाद, क्षेत्रवाद आदि 'वादों' का सहारा लेते हैं; न रिश्वत का सहारा लेते हैं; और ना ही सिफारिश का सहारा लेते हैं।

(१७६)

सज्जन टिकट के बिना रेलगाड़ी में यात्रा नहीं किया करते हैं; और अपनी पहचान को छिपाकर कहीं किसी प्रीतिभोज में खाना नहीं खा लिया करते हैं।

(१७७)

सज्जन यहाँ समाज में किसी भी व्यक्ति को निश्चय ही न मन से ठगा करते हैं; न वाणी से ठगा करते हैं; और ना ही किसी कार्य के द्वारा ठगा करते हैं।

(१७८)

समाज के इस जङ्गल में सज्जनों की स्थिति चन्दन के वृक्षों की स्थिति के समान है; जो अपने आचरण की खुशबू से सबको सुगन्धित करते रहते हैं।

(१७९)

दुर्जनरूपी बगुलों से भरे हुए, समाज के इस तालाब में कहीं-कहीं पर सज्जनों की शक्लवाले हंस भी रहते हैं।

(१८०)

सज्जन यहाँ जिस व्यक्ति में सद्-गुणों को देखते हैं, उसकी वे प्रशंसा करते हैं। उस समय वे न उसकी जाति देखा करते हैं; न उसके जेण्डर पर ध्यान दिया करते हैं; न उसकी उम्र पर विचार किया करते हैं; और ना ही उसके धर्म पर गौर किया करते हैं।

(१८१)

सज्जन अपने जीवन में यहाँ अभिवादन करने योग्य व्यक्तियों का अभिवादन करने में कभी प्रमाद नहीं किया करते हैं।

(१८२)

अपनी पत्नी के बनाए गए जाल में सज्जन नहीं फँसते हैं; और वे उसके द्वारा प्रेरित किए जाने के बावजूद भी अपने माता-पिता की अवहेलना नहीं किया करते हैं।

(१८३)

सज्जन अपने घर में कभी भी बिजली की चोरी नहीं किया करते हैं। और, वे सभी प्राणियों का जीवन बने जल का कभी दुरुपयोग भी नहीं किया करते हैं।

(१८४)

सज्जन यहाँ समाज में किसी भी टैक्स की चोरी निश्चय ही नहीं किया करते हैं। क्योंकि वे यह जानते हैं कि लिए गए टैक्सों से राष्ट्र में विकास के कार्य होते हैं।

(१८५)

सज्जन अपने राष्ट्र की सम्पत्ति को नुकसान नहीं पहुँचाया करते हैं। क्योंकि उसे वे अपनी सम्पत्ति के समान समझते हैं।

(१८६)

सज्जन यहाँ अपने राष्ट्र के हित को सबसे ऊपर माना करते हैं। वे हमेशा ही उसकी प्रतिष्ठा और उन्नति चाहते हैं।

(१८७)

सज्जन अपने पाले हुए मुर्गों को उनके पैरों में उस्तरा बाँधकर और उन्हें शराब पिलाकर उत्तेजित करके यहाँ समाज में लड़ाया नहीं करते हैं।

(१८८)

सज्जन यहाँ अपने घोड़ों से, गधों से या बैल आदि अन्य जानवरों से अपने लोभ के कारण उनके शारीरिक बल की परवाह न करके उनसे अपना मनचाहा ज्यादा बोझ नहीं ढुवाया करते हैं।

(१८९)

सज्जन यहाँ अपने नौकर से भी, अपने घमण्ड के कारण उसके सुख की परवाह न करके, कभी भी ज्यादा काम नहीं कराया करते हैं।

(१९०)

यहाँ गाँवों में खेती का काम करनेवाले तथा शहरों में मेहनत-मजदूरी करके अपनी गुजर-वसर करनेवाले लोगों का सज्जन कभी भी अनादर नहीं किया करते हैं।

(१९१)

कोमल हृदयवाले होने के कारण सज्जन यहाँ समाज में किसी से भी कठोर, अच्छी न लगनेवाली तथा सुननेवाले को पीड़ा पहुँचानेवाली वाणी नहीं बोला करते हैं।

(१९२)

सज्जन यहाँ समाज में अपने आदर की आकाङ्क्षा किसी से भी नहीं रखा करते हैं। लेकिन स्वयं वे सभी का आदर किया करते हैं। क्योंकि वे निश्चय ही अहङ्कार से रहित होते हैं।

(१९३)

उचित और अनुचित का विवेक रखनेवाले होने के कारण सज्जन अपने घर में निकले हुए कूड़े को पड़ौसियों के घरों पर कभी नहीं फैंका करते हैं।

(१९४)

सज्जन यहाँ अपना उपकार करनेवाले व्यक्ति को भूला नहीं करते हैं; और भविष्य में उससे अपना कोई 'स्वार्थ' सिद्ध नहीं होनेवाला होने के बावजूद भी वे उसका हमेशा ख्याल रखा करते हैं।

(१९५)

उपकार करते समय सज्जन यह नहीं देखा करते हैं कि यह व्यक्ति कृतज्ञ है; या यह कृतघ्न है। क्योंकि वे यहाँ, विना किसी भेद-भाव के, सभी का उपकार किया करते हैं।

(१९६)

सज्जन यहाँ अपना अपकार करनेवाले व्यक्ति का भी अपकार नहीं किया करते हैं। वृक्ष यहाँ अपने को काटनेवाले के शिर से अपनी छाया नहीं हटाता है।

(१९७)

सुजनता से सम्पन्न हुए लोग, अर्थात् सज्जन अपने जीवन में अपने स्त्री होने का या अपने पुरुष होने का कभी भी दुरुपयोग नहीं किया करते हैं।

(१९८)

सज्जन अपने ऋण देनेवाले व्यक्ति से छिपते नहीं हैं। बल्कि उसे प्रसन्न करते हुए वे अपनी, ऋण चुकता कर देने की, सचाई को साबित करते हैं।

(१९९)

सज्जन अपनी माँ को समाज में सबसे बढ़कर माना करते हैं। और, उसके सम्मान की रक्षा के लिए वे यहाँ सब कुछ त्याग दिया करते हैं।

(२००)

सज्जन अपनी माँ को यहाँ हमेशा सुख पहुँचाया करते हैं। अपने व्रत के पक्के वे लोग माँ में सभी देवताओं का निवास मानते हैं।

(२०१)

सज्जन अपनी पैतृक सम्पत्ति को प्राप्त करने के लिए कुचेष्टा नहीं किया करते हैं; और क्रमपूर्वक अपने पास भलीभाँति आने पर ही उसे वे अपनी समझा करते हैं।

(२०२)

अनजाने में अपने माता-पिता की तथा अपने गुरु की अवहेलना कर बैठनेवाले सज्जन, उनकी उस अवहेलना का भान होते ही उन दोनों से, अर्थात् अपने माता-पिता से, तथा उनसे, अर्थात् अपने गुरु से, क्षमा माँग लिया करते हैं।

(२०३)

परेशान किए जाने के बावजूद भी सज्जन, परेशान करनेवाले किसी भी व्यक्ति का 'बुरा' नहीं चाहते हैं। मथे जाने के बावजूद भी तालाब, मथनेवाले किसी भी व्यक्ति को तपाता नहीं है।

(२०४)

सज्जन यहाँ सब की कहने योग्य बात को कहते हैं; और छिपाने योग्य बात को छिपा जाते हैं। चिराग़ रोशनी देता है; और अँधेरे को छिपा लेता है।

(२०५)

‘सज्जनता विद्या को पढ़े बिना प्राप्त नहीं होती है।’ यह बात दोषहीन नहीं है। क्योंकि यहाँ समाज में, संसार में, बहुत से बिना पढ़े-लिखे लोगों में भी सज्जनता पाई जाती है।

(२०६)

जो लोग यहाँ सम्पत्ति मिल जाने पर तो मतवाले हो जाया करते हैं, लेकिन विपत्ति आने पर आँसू वहाया करते हैं; तथा जो लोग दूसरों की तरक्की से जला करते हैं; वे निश्चय ही सज्जन नहीं होते हैं।

(२०७)

धन, विद्या, पद और कीर्ति यहाँ सज्जनों को घमण्डी नहीं बना पाते हैं। क्योंकि वे, अर्थात् सज्जन, यहाँ अपनी इंसानियत को किसी भी कीमत पर बेचा नहीं करते हैं।

(२०८)

सज्जन यहाँ समाज में किसी के भी विश्वास की हत्या नहीं किया करते हैं; अर्थात् किसी के भी साथ विश्वास-घात नहीं किया करते हैं। क्योंकि वे विश्वास-घात को इंसान की हत्या के समान मानते हैं।

(२०९)

सज्जन यहाँ समाज में दूसरे लोगों को ठगकर अपनी तरक्की नहीं किया करते हैं। क्योंकि वे ठगी को पाप की बेल मानते हैं।

(२१०)

सज्जन यहाँ समाज में अपने आचरणों से, अपने विचारों से तथा अपने वचनों से हमेशा ही सभी लोगों का भला किया करते हैं।

(२११)

सज्जन स्वयं थके होने के बावजूद भी दूसरों की थकावट को दूर किया करते हैं। वृक्ष स्वयं तपे होने के बावजूद भी राहगीरों के ताप को दूर करते हैं।

(२१२)

सज्जन स्वयं खिन्न होने के बावजूद भी लोगों के खेद को दूर किया करते हैं। वे कम पैसेवाले होने के बावजूद भी गरीबों को पैसों का दान कर दिया करते हैं।

(२१३)

सज्जन यहाँ समाज में अपना नुक़सान सहकर भी अपने वचन का पालन किया करते हैं। भीष्म पितामह ने रणभूमि में अपनी मृत्यु का वरण करके अपने वचन का पालन किया था।

(२१४)

सज्जन अपने निन्दक जनों का भी कल्याण किया करते हैं।
वृक्ष अपने सतानेवालों को भी फल दिया करते हैं।

(२१५)

सज्जन यहाँ समाज में लोगों के दुःखरूपी अन्धकार को दूर करने के लिए दीपक का काम किया करते हैं; उनकी अहङ्काररूपी आग को शान्त करने के लिए बरसनेवाले बादल का काम किया करते हैं; और उनके चिन्तारूपी रोग को दूर करने के लिए वे वैद्य का काम किया करते हैं।

(२१६)

सज्जन यहाँ समाज में लोगों के कष्टरूपी जाड़े के दिनों में सूरज का काम किया करते हैं; उन्हें मानसिक दुःखरूपी साँप से छुटकारा दिलाने के लिए मोर का काम किया करते हैं; और उन्हें निराशा के समुद्र से निकालने के लिए वे पानी के जहाज का काम किया करते हैं।

(२१७)

सज्जन यहाँ समाज में दो लोगों के बीच में झगड़ा कराने के लिए कोशिश नहीं किया करते हैं। आम के वृक्ष कोयल और तोते के बीच में झगड़ा नहीं चाहा करते हैं।

(२१८)

सज्जन यहाँ समाज में हीन जाति में पैदा हुए लोगों का तिरस्कार नहीं किया करते हैं। क्योंकि वे यहाँ सभी लोगों को एक ही ईश्वर की सन्तान समझते हैं।

(२१९)

सज्जन यहाँ समाज में सभी वर्णों पर, सभी जातियों पर और सभी लोगों पर समान दृष्टि रखनेवाले होते हैं।

(२२०)

बच्चों को सज्जन, हीन दृष्टि से नहीं देखा करते हैं; और वे उनके द्वारा भी कही गई अच्छी बात को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लेते हैं।

(२२१)

राष्ट्र चलाने के प्रबन्ध के कामों में सभी क्षेत्रों में पुरुषों की तरह स्त्रियों की भी पात्रता को सज्जन स्वीकार किया करते हैं।

(२२२)

इस समाज में उपकार, यानी परोपकार, का काम सज्जन ही किया करते हैं; तथा उपकार के बदले में उपकार, यानी प्रत्युपकार, का भी काम सज्जन ही किया करते हैं।

(२२३)

‘जहाँ महिलाएँ खुश रहती हैं, वहाँ खुशियाँ रहती हैं।’ इस प्रकार के भाव को सज्जन यहाँ अपने चित्त में हमेशा वसाए रहते हैं।

(२२४)

सज्जन घोर सङ्कट के आ जाने के बावजूद भी घबड़ाते नहीं हैं। पहाड़ आँधी के प्रचण्ड वेग में भी खिसकते नहीं हैं।

(२२५)

सज्जन यहाँ समाज में निर्मल जीवनवाले होकर जिया करते हैं। क्योंकि वे निन्दनीय जीवन की अपेक्षा मरना अच्छा समझते हैं।

(२२६)

सज्जन यहाँ समाज में अपने जीवन में हमेशा ही सन्मार्ग का आश्रय लिया करते हैं; और वे अपने सपने में भी कभी असन्मार्ग का आश्रय नहीं लिया करते हैं।

(२२७)

सज्जन सम्पत्ति के लिए होड़ नहीं लगाते हैं। वे यहाँ समाज में अपनी केवल कीर्ति उपार्जित करने के लिए चेष्टा करते हैं।

(२२८)

सज्जनों का कोई भी काम पाखण्ड, यानी दिखावे, के लिए नहीं होता है। क्योंकि पुण्य चाहनेवाले अच्छे लोग, अर्थात् सज्जन, निश्चय ही पाखण्डी नहीं होते हैं।

(२२९)

सज्जन यहाँ अपने बूढ़े पशुओं की भी सेवा किया करते हैं; तो फिर उनके द्वारा अपने बूढ़े माता-पिता तथा गुरुजनों की सेवा किए जाने का कहना ही क्या?

(२३०)

सज्जन यहाँ अपने जीवन-काल में अपने माता-पिता की तथा अपने गुरु की सेवा करके उनके ऋणों से निर्मुक्त होना चाहते हैं।

(२३१)

सज्जन यहाँ पराई चीजों के लिए कभी ललचाया नहीं करते हैं; और भगवान् द्वारा दी गई अपनी चीजों से अपने मन में हमेशा सन्तुष्ट रहते हैं।

(२३२)

सज्जन पढ़-लिखकर भी घमण्ड निश्चय ही नहीं किया करते हैं। वृक्ष फल-फूलकर भी उद्धत, अर्थात् ऊँची उठी हुई चोटीवाले, नहीं होते हैं।

(२३३)

सज्जन यहाँ समाज में लोगों का भला करते समय, पृथिवी का भला करते हुए बरसते हुए बादलों की तरह, विशेष रूप से नम्र हो जाते हैं।

(२३४)

सज्जन यहाँ समाज के दीन-दुःखी लोगों में भी उस ताकत को पैदा कर देते हैं, जिसके ज़रिए वे लोग भी इस समाज में अपनी अच्छी तरक्की कर लेते हैं।

(२३५)

भलीभाँति सोच-समझकर तय किए हुए अपने करने योग्य कार्य को सज्जन पूरा करते ही हैं; और भगवान् भी उनके उस काम में उनकी सहायता करते हैं।

(२३६)

सज्जनों के मन में सन्तोष रहता है; चेहरे पर मुस्कान रहती है; वचनों में कोमलता रहती है; तथा सभी कामों में पारदर्शिता रहती है।

(२३७)

संसार में समाज में इस कलियुग में भी पवित्रता सज्जनों के मन में, वचन में और कार्य में अपना घर बनाकर रहा करती है।

(२३८)

जिस प्रकार चन्दन के पेड़ हर जङ्गल में नहीं उगते हैं; और साधु-सन्त-महात्मा हर घाट पर नहीं मिलते हैं; उसी प्रकार इस कलियुग में सज्जन हर घर में नहीं होते हैं।

(२३९)

सज्जन यहाँ समाज में लोगों के साथ हमेशा मित्रों की तरह व्यवहार करते हैं: और उन सबको यथाशक्ति इंसानियत सिखाते हैं।

(२४०)

सज्जन यहाँ धरती पर प्रकृति की तथा समाज में इंसानियत की उपेक्षा करके अपना विकास करने के काम को कल्याणकारी नहीं मानते हैं।

(२४१)

सज्जन यहाँ अपने सुख के लिए दूसरे लोगों को दुःखी नहीं किया करते हैं। सज्जन किसी भी व्यक्ति का, उसके पीठ-पीछे भी, नुक़सान नहीं करते हैं।

(२४२)

सज्जन यहाँ अपनी विपत्ति की नदी को अपनी धीरता की नाव से पार किया करते हैं। क्योंकि सज्जन शठता, छल, बल और कूट-कपट-आदि पर विश्वास नहीं रखते हैं।

(२४३)

सज्जन यहाँ लोगों द्वारा क्लेश पहुँचाए जाने के बावजूद भी अपने चित्त में व्याकुल नहीं होते हैं; और उस क्लेश से छुटकारा पाने के लिए वे अपने धैर्य का सहारा लेकर उपाय करते हैं।

(२४४)

सज्जनों को यहाँ चुगली निश्चय ही कभी भी अच्छी नहीं लगती है। क्योंकि चुगली को तो वे गुप्त हत्या के समान समझा करते हैं।

(२४५)

सज्जन यहाँ मोह को मानसिक पीड़ा की बेलों की जड़ माना करते हैं; जो ठीक भी है। क्योंकि मोह से रहित हुए लोग समाज में निश्चिन्त होकर जीते हैं।

(२४६)

सज्जन यहाँ लोभ को शारीरिक बीमारियों की बेलों का बाप माना करते हैं; जो ठीक भी है। क्योंकि लोभ को त्याग देनेवाले लोग समाज में अक्सर आराम से अपना जीवन बिताते हैं।

(२४७)

सज्जन यहाँ क्रोध को बुद्धि और शक्ति का विनाशक माना करते हैं। इसलिए वे उसे अपने जीवन में यथासम्भव दूर रखते हैं।

(२४८)

सज्जन यहाँ अपने मन में किसी भी व्यक्ति के प्रति मात्सर्य का भाव नहीं वसाते हैं। क्योंकि मात्सर्य को तो वे हमेशा ही जहरीले साँप के समान समझते हैं।

(२४९)

सज्जन यहाँ अहङ्कार को अपने दिल में महाशत्रु माना करते हैं। क्योंकि यह जिस व्यक्ति में रहता है, उसे यह धीरे-धीरे खत्म कर देता है।

(२५०)

जिस प्रकार पहाड़, झीलें, नदियाँ, वृक्ष और लताएँ पृथिवी के आभूषण हैं, उसी प्रकार सज्जन मानव-समाज के आभूषण हैं; इसमें कोई सन्देह नहीं है।

(२५१)

यहाँ सभी लोगों को सज्जनों का सत्कार करना चाहिए; और उनके आचरणों का अनुसरण करना चाहिए। ताकि यह मानव-समाज और यह संसार सुखी हो; ऐसी कामना मैं अपने हृदय से करता हूँ।

इस प्रकार
डॉक्टरहरिनारायणदीक्षितविरचित
सज्जनाचरितम् नामक काव्य
समाप्त हुआ।

अब
संक्षिप्त कविपरिचय

(१)

भारत देश में अपनी वर्तनी, यानी वर्णयोजना, में पूर्वार्ध में उत्तर शब्दवाला एक प्रदेश, अर्थात् उत्तर प्रदेश नामवाला एक प्रदेश, सुशोभित है। उसमें जालौन नामवाला एक विख्यात ज़िला है।

(२)

उस जालौन नामक ज़िले में पढ़कुला नामवाला एक प्यारा-सा सुन्दर गाँव है; जिसमें मेरे माता-पिता सुखपूर्वक रहते थे।

(३)

खेती की ज़मीनवाले, अच्छे-बुरे का विवेक रखनेवाले, ब्राह्मण जातिवाले और अपने क्षेत्र में सभी जगह सम्मानित होनेवाले पण्डित रघुवीर सहाय दीक्षित मेरे पिता थे।

(४)

और, मेरी माता श्रीमती सुदामा देवी दीक्षित नामवाली थीं; जो पुण्यजनक कार्यों को पसन्द करनेवाली थीं; कर्मठ थीं; और दीन-दुःखियों पर दया-भाव रखती थीं।

(५)

हरि नारायण नामवाला, अर्थात् डॉक्टर हरि नारायण दीक्षित नामवाला, मैं इन्हीं दोनों का पुत्र हूँ; और मैंने सज्जनाचरितम् नामवाले इस काव्य की रचना की है।

(६)

यहाँ समाज में चारों ओर सज्जनों के आचरितों, अर्थात् आचरणों, को देख-देखकर मैंने उनका और उनके उन आचरणों का महत्त्व लोगों को बताने के लिए इस काव्य की सर्जना की है।

(७)

लोग अगर अपने जीवन में सज्जनों का आदर करेंगे, तो निश्चय ही सभी जगह सुख और शान्ति का प्रसार हो जायगा।

(८)

राजा विक्रमादित्य द्वारा प्रवर्तित संवत्सर २०६६ में आज मकर-सङ्क्रान्ति के दिन यह सज्जनाचरितम् नामक काव्य पूरा हो रहा है।

(९)

इससे यदि यहाँ समाज में सज्जनों के महत्त्व में कुछ वृद्धि होती है, तो मेरा यह परिश्रम निश्चय ही सफल हो जायगा।

(१०)

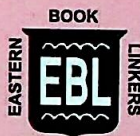
नैनीताल-स्थित कुमाऊँ विश्व विद्यालय से रिटायर्ड होकर
नैनीताल में निवास करता हुआ मैं अपनी काव्य-सर्जना द्वारा
संस्कृत की सेवा कर रहा हूँ।

(११)

मेरे इस काव्य को पढ़कर सज्जन मुझ पर प्रसन्न होंगे; इस
प्रकार का विश्वास मेरे मन में विद्यमान है।

इस प्रकार यहाँ
डॉक्टरहरिनारायणदीक्षितविरचित
अन्त में संक्षिप्त कविपरिचयवाला
सज्जनाचरितम् नामक यह काव्य
सम्पूर्ण हुआ।

अथ नाम—डॉ० हरि नारायण दीक्षित, माता-पिता—(स्व०)
 श्रीमती सुदामा देवी दीक्षित और (स्व०) पण्डित श्री रघुवीर सहाय
 दीक्षित, जन्मस्थान—ग्राम पड़कुला, पोष्ट सरावन, जिला जालौन
 (उ०प्र०), जन्म तिथि—१३ जनवरी, १९३६ ईशवीय,
 सेवानिवृत्तिकालीन पद एवं संस्था—प्रोफेसर एवं संस्कृतविभागाध्यक्ष
 तथा अधिष्ठाता, कला संझाय, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल,
 रचनाएँ—१. संस्कृतानुवादकलिका, २. संस्कृत-निबन्धरश्मिः,
 ३. श्रीमदप्ययदीक्षितचरितम् (गद्यकाव्यम्), ४. तिलकमञ्जरी: एक
 समीक्षात्मक अध्ययन, ५. राष्ट्रियसूक्तिसंग्रहः (कोशकाव्यम्),
 ६. संस्कृत साहित्य में राष्ट्रियभावना, ७. मेनकाविश्वामित्रम् (नाटकम्),
 ८. संस्कृतनिबन्धावली, ९. शोधलेखावली,
 १०. श्रीहनुमद्दूतम् (सन्देशकाव्यम्), ११. गोपालबन्धुः (गद्य-
 काव्यम्), १२. गद्यकाव्यसमीक्षा, १३. भीष्मचरितम् (महाकाव्यम्),
 १४. देशोऽयं कुरुते प्रोन्नतिम् (मुक्तककाव्यम्), १५. उपदेशशती
 (शतककाव्यम्), १६. भारतीयकाव्यशास्त्रमीमांसा (सहस्रम्पादित),
 १७. पण्डितराजजगन्नाथकाव्यग्रन्थावली (सम्पादित और अनूदित),
 १८. गुरुकुलकाङ्गड़ीविश्वविद्यालयीयम् (खण्डकाव्यम्),
 १९. भारतमाता व्रते (महाकाव्यम्), २०. राधाचरितम् (महाकाव्यम्),
 २१. बुन्देलखण्डी कवि पण्डित राजाराममिश्रकाव्यसंग्रह (सम्पादित),
 २२. श्रीगवल्लदेवचरितम् (महाकाव्यम्), २३. पशुपक्षिविचिन्तनम्
 (खण्डकाव्यम्), २४. मनुजाश्रृणुत गिरं मे (मुक्तककाव्यम्),
 २५. अजमोहभङ्गम् (खण्डकाव्यम्), २६. निर्वेदनिर्झरिणी (कथा-
 काव्यम्), २७. वाल्मीकिसम्भवम् (दृश्यकाव्यम्), २८. दुर्जनाचरितम्
 (काव्यम्), २९. सज्जनाचरितम् (काव्यम्), ३०. श्री
 गुरुमहाराजचरितम् (अप्रकाशितं महाकाव्यम्), पुरस्कार—उत्तर प्रदेश
 संस्कृत अकादमी, लखनऊ से १-सन् १९८७ ई० में श्रीहनुमद्दूतम्
 के लिए विशेष पुरस्कार, २-सन् १९८८ ई० में गोपालबन्धुः के लिए
 बाणभट्ट पुरस्कार एवं ३-सन् १९९१ ई० में भीष्मचरितम् के लिए
 विशेष पुरस्कार, ४-तब तक की समग्र संस्कृत काव्यसर्जना के लिए
 भारतीय भाषा परिषद्, कलकत्ता से सन् १९९१ ई० में संस्कृत साहित्य
 सम्मान पुरस्कार, ५-भीष्मचरितम् के लिए साहित्य अकादमी, दिल्ली
 से सन् १९९२ ई० में साहित्य अकादमी पुरस्कार, ६-संस्कृत साहित्य
 में विशिष्ट योगदान के लिए भारत सरकार से सन् २००३ ई० में
 राष्ट्रपति पुरस्कार, ७-लोकसंस्कृति सेवानिधि, मण्डपम्, उरई (जिला
 जालौन-उ०प्र०) से सन् २००६ ई० में पं० गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर'
 अलंकरण पुरस्कार, ८-भीष्मचरितम् के लिए रामकृष्ण जयदयाल
 डालमिया श्रीवाणी न्यास, नई दिल्ली से सन् २००६ ई० में श्रीवाणी
 अलङ्करण पुरस्कार, ९-गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार से
 ई० सन् २००७ में अन्ताराष्ट्रिय विद्यारत्नाकर सारस्वत सम्मान पुरस्कार,
 १०-राधाचरितम् के लिए के०के० बिड़ला फाउण्डेशन, नई दिल्ली से
 सन् २००८ ई० में वाचस्पति पुरस्कार, आवासीय पता—१९६, बड़ा
 बाजार, मल्लीताल, नैनीताल-१ (उत्तराखण्ड), दूरभाष-०५९४२-
 २३६९८१, इत्यलम्।



Eastern Book Linkers

(INDOLOGICAL PUBLISHERS & BOOKSELLERS)

H.O.: 5825, New Chandrawal, Jawahar Nagar,

Delhi-110007 Ph.: 23850287, 09811232913

Showroom : 4806/24, Bharat Ram Road,

Ansari Road, Darya Ganj, Delhi-110002

Phone : 23285413

e-mail : eblindology@gmail.com

e-mail : ebl@vsnl.net

website : www.eblindology.com

